SUPREME AUDIT INSTITUTION OF INDIA
लोकहितार्थ सत्यनिष्ठा
Dedicated to Truth in Public Interest

हिंदी अर्धवार्षिक पत्रिका

वीरांगना

76वां अंक, अप्रैल-सितंबर, 2025

कार्यालय महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी) - द्वितीय, मध्य प्रदेश,
ग्वालियर, लेखा भवन, झांसी रोड, मध्य प्रदेश - 474002

माननीय संसदीय राजभाषा समिति की तीसरी उप-समिति के द्वारा दिनांक 18.07.2025 को महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी) - द्वितीय, मध्य प्रदेश, ग्वालियर के कार्यालय का राजभाषा का सफल निरीक्षण किया गया।

माननीय समिति द्वारा महालेखाकार महोदय को सफल निरीक्षण का प्रमाण-पत्र प्रदान किया गया।

वीरांगना

राजभाषा हिंदी अर्धवार्षिक पत्रिका, 76वां अंक, अप्रैल-सितंबर, 2025

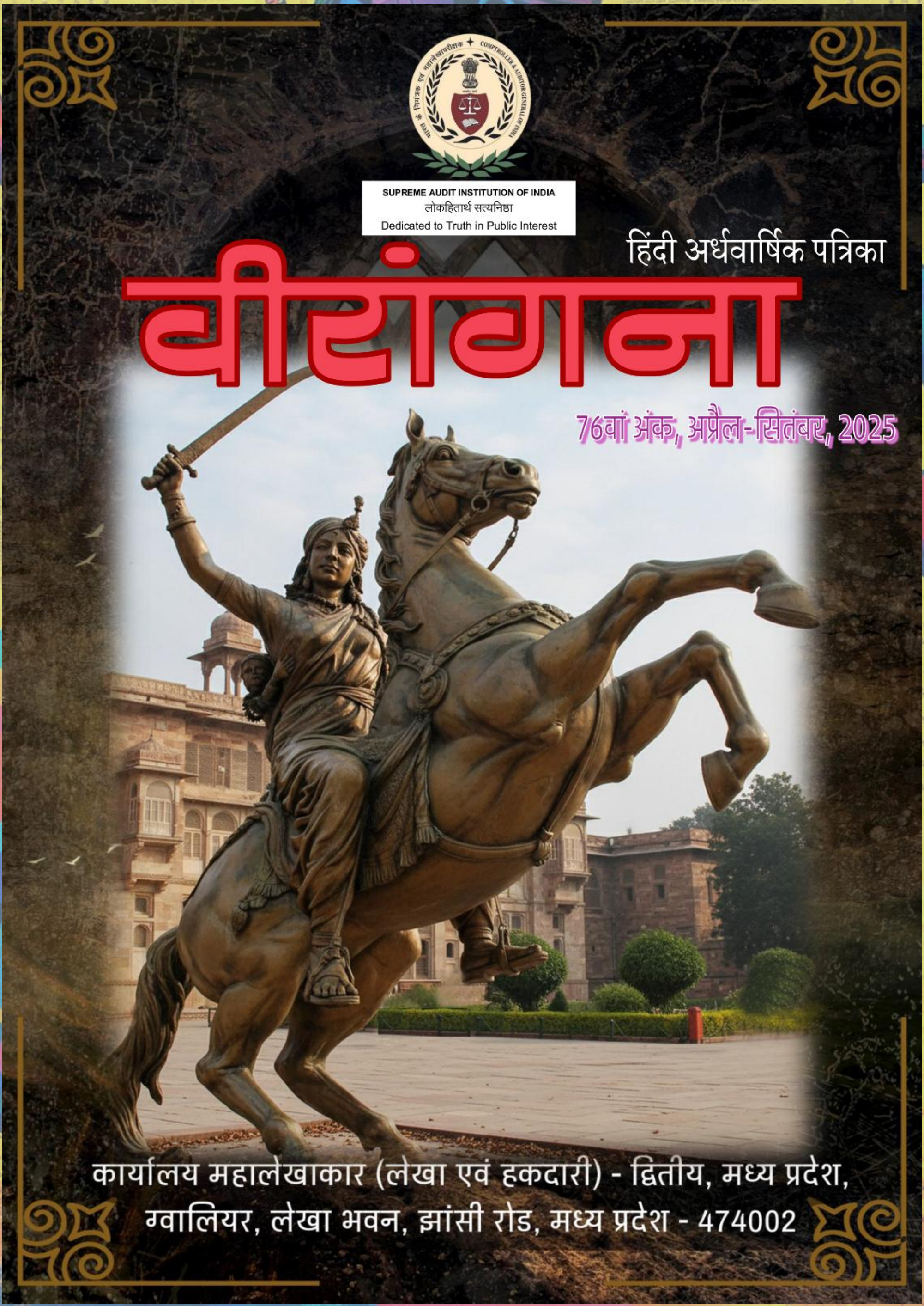

कार्यालय महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी) - द्वितीय, मध्य प्रदेश, ग्वालियर

लेखा भवन, झांसी रोड, ग्वालियर - 474002

ई-मेल : agaemadhyapraesh2@cag.gov.in

वीरांगना पत्रिका परिवार

मुख्य संरक्षक	श्री सिद्धार्थ बोन्दाडे महालेखाकार

संरक्षक

श्री दिनेश हरिराम माटे	श्री हरजिन्दर सिंह
वरिष्ठ उप-महालेखाकार/प्रशासन	उप-महालेखाकार/प्रशासन

परामर्शदात्री समिति

श्री अतुल भार्गव, वरिष्ठ लेखा अधिकारी

सुश्री नसरीन हनफी, वरिष्ठ लेखा अधिकारी

संपादक मंडल

प्रधान संपादक श्री नीरज कुमार, सहायक निदेशक (राजभाषा)

सह संपादक एवं पत्रिका की अवधारणा एवं संपूर्ण डिजाइनिंग

श्री रूपेन्द्र कुमार कौशल, कनिष्ठ अनुवादक

संपादन सहयोग

सुश्री निशा कुमारी	सुश्री पुष्पा साहू	सुश्री काजल वर्मा
वरिष्ठ अनुवादक	कनिष्ठ अनुवादक	सहायक लेखा अधिकारी

-: अस्वीकरण :-

रचनाकारों के विचार उनके व्यक्तिगत विचार हैं। उनसे मुख्य संरक्षक, संरक्षक, परामर्शदात्री समिति तथा संपादक मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	संदेश		संदेश देने वाले अधिकारी का नाम	पृ.सं.
01	हिंदी दिवस 2025 के अवसर पर माननीय गृह मंत्री का संदेश			01
02	महालेखाकार का संदेश		श्री सिद्धार्थ बोन्दाडे	03
03	वरिष्ठ उप-महालेखाकार/प्रशासन का संदेश		श्री दिनेश हरिराम माटे	04
04	उप-महालेखाकार/प्रशासन का संदेश		श्री हरजिन्दर सिंह	05
05	उप-महालेखाकार/लेखा एवं वी.एल.सी. का संदेश		श्री अमर मीना	06
06	प्रधान संपादक की कलम से		श्री नीरज कुमार, सहायक निदेशक (राजभाषा)	07
	गद्य संकलन			
	रचना		**रचनाकार**	
07	'प'	हास्य कथा	श्री जे.जे. श्रीवास्तव, पर्यवेक्षक, सेवा निवृत्त	08
08	मध्यम-वर्गीय परिवार	लेख	सुश्री दीप्ती वर्मा, कनिष्ठ अनुवादक	12
09	नेकी के शार्टकट	हास्य व्यंग्य	श्री रूपेन्द्र कुमार कौशल, कनिष्ठ अनुवादक	15
10	गर्व और शर्म: भारतीय इतिहास के औपनिवेशिक अध्ययन का मूल्यांकन	लेख	श्री विवेक सिंघल, सहायक लेखा अधिकारी	18
11	धन : सभी बीमारियों का रामबाण इलाज?	लेख	श्री निखिलेश कुमार रजक, वरिष्ठ लेखापाल	21
12	एक सामाजिक बंधन	कहानी	श्री संजय त्रिपाठी, सहायक पर्यवेक्षक	24
13	दान की महिमा	कहानी	श्री रितेश कुमार सविता, एम.टी.एस.	27
14	मैं बहादुर नहीं	आत्म मंथन	सुश्री आकांक्षा सिकरवार, अतिथि रचनाकार	28
15	अंबाला बस स्टैंड के कुछ घंटे	यात्रा वृत्तांत	श्री नवीन कुमार कौशिक, सहायक लेखा अधिकारी	30
16	लुप्तप्राय प्रजातियां	हास्य व्यंग्य	श्री लोकेश पाल, वरिष्ठ लेखापाल	35
17	नैमिषारण्य धाम	यात्रा वृत्तांत	श्री सुगंध कुमार वर्मा, सहायक लेखा अधिकारी	37
18	वेदों में नारी	लेख	सुश्री निशा कुमारी, वरिष्ठ अनुवादक	40
19	एक यात्रा जगन्नाथ महाप्रभु की	यात्रा वृत्तांत	सुश्री पुष्पा साहू, कनिष्ठ अनुवादक	43
	पद्य संकलन			
20	सरकारी नौकरी है सबसे प्यारी		श्री विद्या प्रकाश, सहायक लेखा अधिकारी	47
21	अंत?		श्री कृष्ण कुमार जांगिड़, सहायक लेखा अधिकारी	22
22	ये तेरा बिल, न मेरा बिल		श्री प्रदीप कुमार यादव, सहायक लेखा अधिकारी	49
23	कामकाजी महिला		सुश्री सुष्मिता श्रीवास्तव, आशुलिपिक	50
24	मैं कायर हूँ !!		श्री राहुल मैत्रेय, वरिष्ठ लेखापाल	51
25	युद्ध जरूरी होता है		श्री देवेन्द्र कुमार मिश्रा, सहायक लेखा अधिकारी	52
26	पिता का संघर्ष		सुश्री काजल वर्मा, सहायक लेखा अधिकारी	54
27	मेरा सच		श्री नीरज नायक, सहायक लेखा अधिकारी	55
	कार्यालयीन गतिविधियाँ		**पृष्ठ संख्या 58 से 72**	

हिंदी दिवस 2025 के अवसर पर माननीय गृह मंत्री का संदेश

अमित शाह
गृह मंत्री एवं सहकारिता मंत्री
भारत सरकार

सत्यमेव जयते

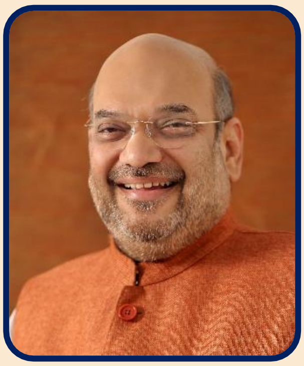

प्रिय देशवासियों !

आप सभी को हिंदी दिवस की हार्दिक शुभकामनाएँ।

भारत मूलतः भाषा-प्रधान देश है। हमारी भाषाएँ सदियों से संस्कृति, इतिहास, परंपराओं, ज्ञान-विज्ञान, दर्शन और अध्यात्म को पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ाने का सशक्त माध्यम रही हैं। हिमालय की ऊँचाइयों से लेकर दक्षिण के विशाल समुद्र तटों तक, मरुभूमि से लेकर बीहड़ जंगलों और गाँव की चौपालों तक, भाषाओं ने हर परिस्थिति में मनुष्य को संवाद और अभिव्यक्ति के माध्यम से संगठित रहने और एकजुट होकर आगे बढ़ने का मार्ग दिखाया है।

मिलकर चलो, मिलकर सोचो और मिलकर बोलो, यही हमारी भाषाई और सांस्कृतिक चेतना का मूल मंत्र रहा है।

भारत की भाषाओं सबसे बड़ी विशेषता यह रही है कि उन्होंने हर वर्ग और समुदाय को अभिव्यक्ति का अवसर दिया। पूर्वोत्तर में बीहू का गान, तमिलनाडू में ओवियालू की आवाज, पंजाब में लोहड़ी के गीत, बिहार में विद्यापति की पदावली, बंगाल में बाउल संत के भजन, आदिम समाज में ढोल-मांदर की थाप पर करमा की गूँज, माताओं की लोरीयाँ, किसानों का बारहमासा, कजरी गीत, भिखारी ठाकुर की 'बिदेशिया', इन सबने हमारी संस्कृति को जीवन्त और लोककल्याणकारी बनाया है।

मेरा स्पष्ट मानना है कि भारतीय भाषाएँ एक दूसरे की सहचर बनकर, एकता के सूत्र में बंधकर आगे बढ़ रही हैं। संत तिरूवल्लुवर को जितनी भावुकता से दक्षिण में गाया जाता है, उतनी ही रुचि से उत्तर में भी पढ़ा जाता है। कृष्णदेवराय जितने लोकप्रिय दक्षिण में हुए, उतने ही उत्तर में भी। सुब्रमण्यम भारती की राष्ट्रप्रेम से ओत-प्रोत रचनाएँ हर क्षेत्र के युवाओं में राष्ट्रप्रेम को प्रबल बनाती हैं। गोस्वामी तुलसीदास को हर एक देशवासी पूजता है, संत कबीर के दोहे तमिल, कन्नड़ और मलयालम अनुवादों में पाए जाते रहे हैं। सूरदास की पदावली दक्षिण भारत के मंदिरों और संगीत परंपरा में आज भी प्रचलित है। श्रीमत शंकरदेव, महापुरुष माधवदेव को हर वैष्णव जानता है। और, भूपेन हजारिका को हरियाणा का युवा भी गुनगुनाता है।

गुलामी के कठिन दौर में भी भारतीय भाषाएँ प्रतिरोध की आवाज बनीं और आज़ादी के आंदोलन को राष्ट्रव्यापी बनाने में भूमिका निभाई। हमारे स्वाधीनता सेनानियों ने जनपदों की भाषाओं में, गाँव-देहात की भाषा में लोगों को आज़ादी के आंदोलन से जोड़ा। हिंदी के साथ ही सभी भारतीय भाषाओं के कवियों, साहित्यकारों और नाटककारों ने लोकभाषाओं, लोककथाओं, लोकगीतों और लोकनाटकों के माध्यम से हर आयु, वर्ग और समाज के भीतर स्वाधीनता के संकल्प को प्रबल बनाया। वन्दे मातरम् और जय हिंद जैसे नारे हमारी भाषाई चेतना से ही उपजे और स्वतंत्र भारत के स्वाभिमान का प्रतीक बने।

जब देश आजाद हुआ, तब हमारे संविधान निर्माताओं ने भाषाओं की क्षमता और महत्ता को देखते हुए इस पर विस्तार से विचार-विमर्श किया और 14 सितम्बर 1949 को देवनागरी लिपि में लिखित हिंदी को राजभाषा के रूप में अंगीकृत किया। संविधान के अनुच्छेद 351 में यह दायित्व सौंपा गया कि हिंदी का प्रचार-प्रसार हो और वर भारत की सामासिक संस्कृति का प्रभावी माध्यम बने।

पिछले एक दशक में प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी के नेतृत्व में भारतीय भाषाओं और संस्कृति के पुनर्जागरण का एक स्वर्णिम कालखंड आया है। चाहे संयुक्त राष्ट्रसंघ का मंच हो, जी-20 का सम्मेलन या SCO में संबोधन, मोदी जी ने हिंदी और भारतीय भाषाओं में संवाद कर भारतीय भाषाओं का स्वाभिमान बढ़ाया है।

मोदी जी ने आजादी के अमृत काल में गुलामी के प्रतीकों से देश को मुक्त करने के जो पंच प्रण लिए थे, उसमें भाषाओं की बड़ी भूमिका है। हमें अपनी संवाद और आपसी संपर्क भाषा के रूप में भारतीय भाषाओं को अपनाना चाहिए, न कि किसी विदेशी भाषा को। तभी हम गुलामी की मानसिकता से पूरी तरह मुक्त हो पाएँगे।

राजभाषा हिंदी ने 76 गौरवशाली वर्ष पूरे किए हैं। राजभाषा विभाग ने अपनी स्थापना के स्वर्णिम 50 वर्ष पूर्ण कर हिंदी को जनभाषा और जनचेतना की भाषा बनाने का अद्भुत कार्य किया है। 2014 के बाद से सरकारी कामकाज में हिंदी के प्रयोग को निरंतर बढ़ावा दिया गया है। संसदीय राजभाषा समिति ने वर्ष 1976 में अपनी स्थापना से लेकर 2014 तक माननीय राष्ट्रपति महोदया को प्रतिवेदन के 9 खंड प्रस्तुत किए थे, वहीं 2019 से अब तक 3 खंड प्रस्तुत किए जा चुके हैं। 13-14 नवम्बर 2021 को वाराणसी से प्रारंभ हुए अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलनों की परम्परा भी लगातार आगे बढ़ रही है।

सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भी राजभाषा विभाग ने उल्लेखनीय उपलब्धियाँ हासिल की हैं। न्यूरल मशीन ट्रांसलेशन पर आधारित 'कंठस्थ 2.0' में आज 5 करोड़ से अधिक वाक्यों का ग्लोबल डाटाबेस उपलब्ध है। 'लीला राजभाषा' और 'लीला प्रवाह' जैसे शिक्षण पैकजों के माध्यम से 14 भारतीय भाषाओं में हिंदी सीखने की सुविधा उपलब्ध कराई गई है। वर्ष 2022 में शुरू हुआ 'हिंदी शब्द सिंधु' अब तक लगभग 7 लाख शब्दों से समृद्ध हो चुका है।

2024 में हिंदी दिवस पर 'भारतीय भाषा अनुभाग' की स्थापना की गई, जिसका उद्देश्य सभी प्रमुख भारतीय भाषाओं के बीच सहज अनुवाद सुनिश्चित करना है। हमारा लक्ष्य यह है कि हिंदी और अन्य भारतीय भाषाएँ केवल संवाद का माध्यम न रहकर तकनीक, विज्ञान, न्याय, शिक्षा और प्रशासन की धुरी बनें। डिजिटल इंडिया, ई-गवर्नेंस, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और मशीन लर्निंग के इस युग में हम भारतीय भाषाओं को भविष्य के लिए सक्षम, प्रासंगिक और वैश्विक तकनीकी प्रतिस्पर्धा में भारत को अग्रणी बनाने वाली शक्ति के रूप में विकसित कर रहे हैं।

मित्रों, भाषा सावन की उस बूँद की तरह है, जो मन के दुःख और अवसाद को धोकर नई उर्जा और जीवन शक्ति देती है। बच्चों की कल्पना से गढ़ी गई अनोखी कहानियों से लेकर दादी-नानी की लोरियों और किस्सों तक, भारतीय भाषाओं ने हमेशा समाज को जिजीविषा और आत्मबल का मंत्र दिया है।

मिथिला के कवि विद्यापति जी ने ठीक ही कहा है:

"देसिल बयना सब जन मिट्ठा।"

अर्थात् अपनी भाषा सबसे मधुर होती है।

आइए, इस हिंदी दिवस पर हम हिंदी सहित सभी भारतीय भाषाओं का सम्मान करने और उन्हें साथ लेकर आत्मनिर्भर, आत्मविश्वासी तथा विकसित भारत की दिशा में आगे बढ़ने का संकल्प लें।

आप सभी को एक बार फिर से हिंदी दिवस की हार्दिक शुभकामनाएँ।

वंदे मातरम्।

नई दिल्ली,

14 सितंबर, 2025

(अमित शाह)

संदेश

श्री सिद्धार्थ बोन्दाडे
महालेखाकार
एवं मुख्य संरक्षक

यह अत्यंत हर्ष का विषय है कि हमारी कार्यालयीन गृह-पत्रिका 'वीरांगना' के 76वें नवीनतम अंक का प्रकाशन किया जा रहा है। राजभाषा के प्रचार-प्रसार में गृह-पत्रिका का प्रकाशन एक सराहनीय पहल है। सरकारी कार्यालयों में राजभाषा हिंदी के प्रति रचनात्मकता के संवर्धन में विभागीय गृह-पत्रिकाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है। भाषाई विविधता वाले देश में ही नहीं अपितु विश्व पटल पर भी हिंदी सेतु का कार्य करती है। यह पत्रिका केवल शब्दों का संग्रह नहीं, बल्कि हमारी संस्कृति, समाज एवं विचारों का दर्पण भी है।

पत्रिका में विविध विषयों से संबंधित लेखों का समावेश है जो कार्मिकों की रचनात्मकता एवं राजभाषा के प्रति समर्पण भाव को दर्शाती है। साथ ही, रचनाकारों की अभिव्यक्ति को सार्थक मंच प्रदान करती है। अपना समस्त कार्य हिंदी में करना हमारा संवैधानिक दायित्व ही नहीं अपितु राष्ट्रीय पहचान का भी प्रतीक है। राजभाषा के संवर्धन के लिए कार्यालय में राजभाषा हिंदी के सरल व सहज रूप का अधिकाधिक प्रयोग किया जाना चाहिए। मुझे आशा है कि 'वीरांगना' का यह नवीनतम अंक हिंदी भाषा के विकास एवं कार्यालयीन हिंदी के प्रचार-प्रसार में सहायक सिद्ध होगा।

पत्रिका के सफल प्रकाशन पर बधाई एवं पत्रिका के स्वर्णिम भविष्य हेतु मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ।

(सिद्धार्थ बोन्दाडे)

संदेश

श्री दिनेश हरिराम माटे
वरिष्ठ उप-महालेखाकार/प्रशासन
एवं संरक्षक

यह प्रसन्नता का विषय है कि कार्यालय की राजभाषा हिंदी की गृह पत्रिका वीरांगना के 76वें अंक का प्रकाशन हो रहा है। राजभाषा हिंदी न केवल कार्यालयीन कामकाज की भाषा है, बल्कि हम सभी का संवैधानिक दायित्व भी है, जिसका अनुपालन करना एवं विनिर्दिष्ट दिशा-निर्देशों के अनुसार कार्य करना भी अति आवश्यक है।

गृह पत्रिका के प्रकाशन से राजभाषा कार्यान्वयन के लिए अनुकूल वातावरण बनता है। इसके माध्यम से हिंदी के प्रति रुचि रखने वालों के लिए मार्ग प्रशस्त होता है। हिंदी भाषा की सहजता एवं सुगमता ने लोगों के बीच अपनी पहचान बनाई है। मेरा विश्वास है कि वीरांगना में समाहित लेख, रचनाएं एवं पाठ्य सामग्री पाठकों के लिए प्रेरणादायक तथा ज्ञानवर्धक सिद्ध होंगे।

मैं पत्रिका प्रकाशन के इस अथक प्रयास के लिए अपना उत्कृष्ट योगदान प्रदान करने वाले सभी रचनाकारों एवं संपादक मंडल को हार्दिक शुभकामनाएं देता हूँ। मुझे आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि वीरांगना पत्रिका का यह अंक अत्यंत रोचक, संग्रहणीय एवं प्रेरणादायक सिद्ध होगा।

(दिनेश हरिराम माटे)

संदेश

श्री हरजिन्दर सिंह
उप-महालेखाकार/प्रशासन
एवं संरक्षक

मुझे यह जानकर अत्यंत संतोष एवं गर्व का अनुभव हो रहा है कि हमारी कार्यालयीन गृह-पत्रिका का अर्धवार्षिक 76वाँ अंक प्रकाशन किया जा रहा है। यह पत्रिका न केवल हमारे विभाग की सृजनशील ऊर्जा का प्रतीक है, बल्कि राजभाषा हिंदी के संवर्धन और उसके प्रभावी अनुपालन के प्रति हमारी निरंतर प्रतिबद्धता का भी द्योतक है।

हिंदी, हमारी राजभाषा होने के साथ-साथ, हमारी सांस्कृतिक अस्मिता की आधारशिला है। सरकारी तंत्र में हिंदी के सरल, शुद्ध एवं व्यवहारिक रूप के प्रयोग को प्रोत्साहित करना हमारी प्राथमिक जिम्मेदारी है। मुझे यह देखकर प्रसन्नता है कि विभाग के अधिकारी-कर्मचारी न केवल अपने दैनिक कार्यों में हिंदी का प्रभावी प्रयोग कर रहे हैं, बल्कि साहित्यिक गतिविधियों में भी उत्साहपूर्वक भाग लेकर इस दायित्व को और अधिक सार्थक बना रहे हैं।

इस अंक में प्रकाशित लेख, कविताएँ एवं अन्य रचनाएँ हमारे कार्मिकों की विचार-समृद्धि, अभिव्यक्ति-कौशल तथा संगठनात्मक संस्कारों का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। यह पत्रिका विभिन्न दृष्टिकोणों एवं अनुभवों को साझा करने का महत्वपूर्ण मंच है, जो न केवल रचनात्मकता को बढ़ावा देती है बल्कि विभागीय एकता और संवाद को भी सुदृढ़ करती है।

मुझे विश्वास है कि यह 76वाँ अंक पाठकों के लिए उपयोगी, प्रेरक एवं रोचक सिद्ध होगा तथा राजभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार को नई दिशा प्रदान करेगा।

मैं संपादकीय मंडल एवं सभी सहयोगियों को इस उत्कृष्ट प्रयास के लिए हार्दिक बधाई देता हूँ और पत्रिका की निरंतर उन्नति और उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ।

(हरजिन्दर सिंह)

संदेश

श्री अमर मीना
उप-महालेखाकार/लेखा
एवं वी.एल.सी

यह बताते हुए गर्व की अनुभूति हो रही है कि वर्ष 2025-26 से कार्यालय महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी) मध्य प्रदेश, ग्वालियर द्वारा प्रकाशित की जाने वाली पत्रिका का प्रकाशन प्रत्येक छमाही पर किया जा रहा है। 'वीरांगना' का 76वाँ अंक आपके समक्ष अपनी विविधताओं को समेटे हुए प्रस्तुत है।

'वीरांगना' मात्र एक पत्रिका न होकर एक ऐसा माध्यम है जो हिंदी की रचनाओं के माध्यम से पूरे कार्यालय को एक सूत्र में पिरोती है। हिंदी में काम और प्रचार-प्रसार के साथ-साथ वीरांगना पत्रिका अपने आप में बहुआयामी विचारों को प्रकट करती है। यह कार्यालय के कार्मिकों को एक सोच प्रदान करती है जिससे वो अपने अंदर के रचनाकार को एक पहचान देने का प्रयास करते हैं। राजभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार में पत्रिकाओं की अहम भूमिका होती है साथ ही कार्यालयों के कार्मिकों को अपनी लेखन प्रतिभा दिखाने का भी अवसर प्राप्त होता है। इस अंक में जिन अधिकारियों और कर्मचारियों के लेख प्रकाशित हुए हैं, मैं उन्हें हार्दिक बधाई देता हूँ।

हिंदी हमारी राजभाषा है, हमारी सांस्कृतिक धरोहर है और हमारे राष्ट्रीय गौरव का प्रतीक है। कार्यालय में हिंदी का उपयोग न केवल संवाद को सरल बनाता है, बल्कि यह हमारी राष्ट्रीय एकता और अखंडता को भी मजबूत बनाती है।

मुझे विश्वास है कि 'वीरांगना' का यह अंक पाठकों को अपनी एवं हिंदी की ओर आकर्षित करने में सहायक होगा।

मैं संपादक मंडल एवं पत्रिका से जुड़े समस्त रचनाकारों का हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ, साथ ही यह आशा करता हूँ कि हम सभी राजभाषा हिंदी के प्रयोग में सदैव अपना योगदान देने के लिए तत्पर रहेंगे।

अमर मीना

(अमर मीना)

प्रधान संपादक की कलम से

श्री नीरज कुमार
सहायक निदेशक (राजभाषा)

हम अपनी कार्यालयीन गृह-पत्रिका **'वीरांगना'** के अर्धवार्षिक 76वें अंक को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए अपार हर्ष का अनुभव कर रहे हैं। इस अंक की सबसे बड़ी विशेषता इसका **विषय-विस्तार, सामाजिक संवेदनाओं से जुड़ाव, और रचनात्मक विविधता** है, जिसने इसे एक जीवंत साहित्यिक संकलन बना दिया है।

इस अंक में जहाँ एक ओर *मध्यम-वर्गीय संघर्ष, पिता के त्याग, कामकाजी महिला की चुनौतियाँ और नेकी के शार्टकट* जैसी रचनाएँ हमारे समाज के जमीनी यथार्थ को शब्द देती हैं, वहीं *दान की महिमा, एक सामाजिक बंधन* जैसे लेख हमारे नैतिक मूल्यों और मानवीय रिश्तों की गहराई को उजागर करते हैं।

इतिहास और समाज पर गंभीर दृष्टि डालते हुए *भारतीय इतिहास के औपनिवेशिक अध्ययन का मूल्यांकन* जैसे लेख पाठकों को विचारोत्तेजक विमर्श की ओर ले जाते हैं। वहीं *लुप्तप्राय प्रजातियाँ* जैसा विषय हमारे अतीत की चीजों को पीछे छोड़ने पर कटाक्ष करता है।

आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक यात्राओं के अंतर्गत *नैमिषारण्य धाम* और *जगन्नाथ महाप्रभु की यात्रा* जैसी रचनाएँ हमारी सांस्कृतिक विरासत का सजीव परिचय कराती हैं। *वेदों में नारी* जैसे लेख पाठकों को इतिहास, धर्म और समाज में स्त्री की प्रतिष्ठित भूमिका की झलक देते हैं।

"मैं बहादुर नही", "मैं कायर हूँ !!" और *"अंत?"* जैसी मार्मिक अभिव्यक्तियाँ मानवीय मनोदशा, आत्मसंघर्ष और विचार-विप्लव को प्रभावी ढंग से सामने लाती हैं। इसके साथ ही *सरकारी नौकरी है सबसे प्यारी* जैसी रचना हल्के-फुल्के व्यंग्य और कार्यालयीन जीवन के यथार्थ को रोचक रूप में प्रस्तुत करती है।

समकालीन अनुभवों पर आधारित *अंबाला बस स्टैंड के कुछ घंटे* और *ये तेरा बिल, न मेरा बिल* जैसे लेख हमारे आसपास के जीवन तथा सामाजिक व्यवहार के यथार्थ को सहजता से चित्रित करते हैं।

इस अंक की विविध रचनाओं में एक बात समान है—**हर रचना अपने भीतर एक संवेदना, एक विचार और एक उद्देश्य समेटे हुए है।** यह पत्रिका केवल साहित्य का मंच नहीं, बल्कि हमारे कार्मिकों की भावनाओं, अनुभवों और सृजनशीलता का दर्पण है।

विश्वास है कि यह 76वाँ अंक पाठकों को न केवल आनंद देगा, बल्कि सोचने, समझने और समाज को नए दृष्टिकोण से देखने को प्रेरित भी करेगा।

संपादक मंडल सभी रचनाकारों, सहयोगियों और पाठकों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता है। आपकी भागीदारी ही इस पत्रिका को निरंतर समृद्ध और जीवंत बनाती है।

नीरज

(नीरज कुमार)

'प'

हास्य व्यंग्य

श्री जे.जे. श्रीवास्तव 'ज्योति'
पर्यवेक्षक (सेवानिवृत्त)

बदकिस्मती से एक दिन मैंने अपने अखबार वाले से एक अच्छी कम्पनी की, आई.एस.आई.मार्क "मासिक पारिवारिक पत्रिका" की पर्यटन विशेषांक की प्रति ले ली, और बड़े एहसान के साथ अपनी धर्मपत्नी मंजू के हाथ थमाकर कार्यालय के लिए कूच कर गया। अब मुझे क्या पता था कि वह "मासिक पारिवारिक पत्रिका" मेरे लिए "मासिक पारिवारिक कलह" का कारण बन जाएगी। हमारे कार्यालय जाने के बाद श्रीमतीजी ने पत्रिका को पढ़ा कम और देखा ज्यादा। वैसे भी आजकल लगभग सभी पारिवारिक पत्रिकाएं पठनीय कम और दर्शनीय अधिक होती हैं। बस, मंजू की मृगनयनी आँखें कलरफुल "गोवा चलें" लेख पर बच्चों के हाथ पर चिपके टेटू की तरह ऐसी चिपकी कि मैं चाहते हुए भी दोनों हाथों से उसे छुड़ा नहीं सका।

> 'प' अक्षर से शुरू होने वाली प्रत्येक चीज से सावधान रहना। वह चाहे जीवित हो या अजीवित, चल हो या अचल, व्यक्ति हो या वस्तु। समय इतना खतरनाक है कि 'प' तुम्हारी मृत्यु का कारण तक बन सकता है।

मैंने बचकर भागने के उद्देश्य से बहाना बनाते हुए कहा- "प्रिये! तुम्हें याद नहीं है कि मुझे पंडित वृन्दावन लाल शास्त्री, वृन्दावन वालों ने जन्मपत्री देखने के लिये बुलाया है। शास्त्रीजी महीनों बाद तो शहर में आए हैं। अब देश में इतनी अच्छी जन्मपत्री देखने वाली पंडित हैं ही कितने।" लेकिन हमारी श्रीमतीजी ने हमारे बचकर भागने के सभी दरवाजों, खिड़कियों पर तो पहले से ही मोटे-मोटे अलीगढ़ी ताले लटका रखे थे। वह तपाक से चिल्लाई "बेटा संदेश। पापा की बाईक बाहर तो निकालना। उन्हें अभी शास्त्रीजी के घर जाना है।" कहने के साथ ही वह मुझे लगभग धकियाती हुई दरवाजे तक ले गई और बोली- "जल्दी आना, हमें बहुत सी तैयारियां करनी हैं।"

आधा घंटे बाद ही मैं जन्मपत्री सहित पंडित वृन्दावन लाल शास्त्री जी के सामने एक मुजरिम की तरह मुंह नीचे करके बैठा हुआ था। पंडितजी ने अपनी इकहत्तर पतझड़ देख चुकी अनुभवी आँखों के ऊपर कसी दूरबीन मेरी जन्मपत्री पर ऐसे गड़ा रखी थीं मानों जन्मपत्री पर दाल बीन रहे हों। कुछ देर के बाद उनके होंठ हिले- "हूँ। यह बात है। सातवें खाने में मंगल और चौथे खाने में राहु और केतु दोनों "डांस" कर रहे हैं। "शनि" यह रहा। राशि का स्वामी "शनि"। तभी रक्षा कर रहा है, वरना खेल कर देता।"

"क्या हुआ शास्त्रीजी?" - मैंने पंडितजी को शांत देखकर, घबराकर पूछा।

"यजमान। शनि की साढ़े साती चल रही है, जो आपके परिवार में आप पर ही अधिक भारी है। परिवार के शेष सदस्य तो मजे में रहेंगे। तुम सुबह अंधेरे में ही शनि का छायादान किया करों, सरसों के तेल में चेहरा देखकर। हनुमान चालीसा और शनिदेव का "ओम प्रां प्रीं. प्रों शः शनिश्चराय नमः" जाप की एक माला किया करो। काले घोड़े की नाल से बनी अंगूठी पहनो तो शनिदेव प्रसन्न रहेंगे।"

"जी शास्त्रीजी। वैसे मैं कई लीटर सरसों का तेल छायादान कर चुका हूँ। हनुमान चालीसा रोज पढ़ता हूँ। यह काले घोड़े की नाल से बना छल्ला पचास रुपए में एक दुकान से खरीदा है"- मैं एक ही साँस में सब कुछ बोल गया।

पंडितजी ने एक बार पुनः अपनी दूरबीन को जन्मपत्री पर रखकर कष्ट दिया और मेरी ओर देखकर

बोले- “यजमान एक विशेष और तुम्हारे जीवन के लिए सबसे महत्वपूर्ण बात सदा याद रखना कि ‘प’ अक्षर से शुरू होने वाली प्रत्येक चीज से सावधान रहना। वह चाहे जीवित हो या अजीवित, चल हो या अचल, व्यक्ति हो या वस्तु।”

‘मसलन’ - मैंने पूरा मुंह खुले-खुले ही प्रश्न किया।

“समय इतना खतरनाक है कि ‘प’ तुम्हारी मृत्यु का कारण तक बन सकता है”-पंडितजी ने मुझे लगभग डराते हुए कहा। “पंडितजी। मैं अपने परिवार के साथ ‘गोवा’ घूमने जा रहा हूँ। कोई अशुभ तो नहीं होगा?”- मैंने प्रश्न किया।

“नहीं कोई अशुभ नहीं होगा। बस ‘प’ अक्षर से आरम्भ होने वाली प्रत्येक वस्तु व्यक्ति, स्थान से बचते रहना, फिर कोई भी समस्या आ ही नहीं सकती”-पंडितजी पूरे आत्मविश्वास के साथ बोले।

“यह ‘प’ केवल गोवा भ्रमण के लिए ही हानिकारक है या आने के बाद भी” मैंने उत्सुकतावश पूछा। नहीं यह ‘प’ तो तुम्हारे लिए हमेशा हानिकारक है, चाहे वह घर हो या परदेश, स्वर्ग हो या नर्क” - पंडितजी ऐसे बोले जैसे अब मेरे मुंह लगना नहीं चाह रहे हों।

“क्या इसमें पत्नी, परिवार और मेरा साला ‘पवन’ भी शामिल हो सकता है”- मैंने जेब से एक पुराना, भदरंगा और वर्षों पूर्व अपना वास्तविक रंग खा चुका, कपड़े का चीथड़ा निकाला और उस रूमाल से माथे को रगड़कर लाल करते हुए पसीना पोंछा।

“हाँ भई हाँ”-पंडितजी टेलीविजन पर दिखाए जाने वाले विज्ञापन की स्टाइल में बोले और मुझे छोड़कर तुरंत अपनी तलवार दूसरे ग्राहक के गले पर रखते हुए उसके हाथों से जन्मपत्री छीनकर अपनी फीस पक्की करने की पृष्ठभूमि तैयार करने में व्यस्त हो गए।

मैंने उनके पीछे मोटे-मोटे अक्षरों में खुदी हुई फिक्स मजूरी (दक्षिणा) उनके हाथों में रखकर, आखिरी बार उस पर छपे गांधीजी को देखा और वहाँ से सात दो नौ हो गया।

“इतनी जल्दी तुमने पैकिंग भी कर ली? ‘रिजर्वेशन’ कराना है, कुछ पैसों की भी व्यवस्था करनी है”- मैंने प्रकरण को कुछ टालने के लिए पृष्ठभूमि तैयार की। लेकिन हमारी श्रीमतीजी ने भी पन्द्रह साल हमारे साथ रहते हुए कच्ची गोलियाँ नहीं खेली थीं। वह तपाक से बोली- “तुम्हारे भरोसे तो हम घूम आए गोवा। “पर्यटन विशेषांक” में लिखा है कि पर्यटन पर जाने के लिए किसी “प्राइवेट रेलवे टिकट बुकिंग कार्यालय” से रिजर्वेशन कराया जा सकता है। अतः मैंने गीता के मिस्टर पदम को फोन लगाकर गोवा की चार “फर्स्ट क्लास ए.सी.” की टिकटें बुक करवा ली हैं। बस तीन-तीन सौ रुपए ऊपर लगेंगे। वह प्राईवेट रेलवे टिकट बुकिंग कार्यालय चलाते हैं, न।”

“क्या? फर्स्ट क्लास ए.सी. की चार टिकटें, वह भी तीन-तीन सौ रुपए एक्स्ट्रा देकर”- मैं ऐसे चिल्लाया जैसे किसी जेबकट ने मेरी जेब से पचास हजार रुपये से भरा हुआ बटुआ निकाल लिया हो।

“लेकिन तुम्हें पता भी है कि फर्स्ट क्लास ए.सी. का ग्वालियर से गोवा तक का किराया कितना..............

“वो तुम्हारा हैडेक है। किचिन में मेरी सब्जी जल रही है”- इतना कहकर मंजू किचिन की ओर लपक गई।

खैर। कुछ दोस्तों का कर्जदार बनकर हम सपरिवार “भारतीय रेलवे” के फर्स्ट क्लास ए.सी. के डिब्बे में जीवन में पहली बार यात्रा कर रहे थे। परिवार के सभी सदस्य आनंद में तथा मैं दोस्तों के कर्ज की वापसी के बारे में सोचने में व्यस्त था।

आखिर ‘पणजी’ (गोवा की राजधानी) स्टेशन आ ही गया। स्टेशन के बाहर आते ही एक टैक्सी वाले सरदारजी ने हमें हाथों हाथ लिया। मैंने उसको एक गरीब इंसान बताते हुए सस्ते और अच्छे होटल में ले चलने को कहा। सरदारजी अपने मस्त

अंदाज में बाले-"अजी बस दो सौ रुपया, डबल बैड, बालकनी, अटैच लैट-बाथ, नीचे मार्केट, चौबीस घण्टे कन्वेंस और पास ही बीयर बार और जी होटल का नाम "पैराडाईज"।

"क्या! पैराडाईज......। सरदार जी। क्या यहाँ और कोई होटल नहीं है" मुझे पंडित जी की चेतावनी एकदम याद आ गई।

"हाँ जी हैं न, होटल गीतांजलि। पर वह बहुत महंगा है।"

"तो फिर वहीं ले चलो। अब कोई रोज-रोज तो घूमने के लिए गोवा आता नहीं है"- मैंने सरदारजी को लगभग आदेश देते हुए कहा।

मेरी पत्नी ने मुझे ऐसे देखा जैसे मन ही मन कह रही हो कि सठिया तो नहीं गए। वैसे अभी सठियाने की उम्र तो नहीं हुई है।

होटल गीतांजलि पहुँचकर कमरा बुक कराने पर महिला रिसेप्शनिष्ट ने मुस्कुराते हुए कहा - "सर, आप बहुत लकी हैं, जो आपको पहली मंजिल पर ही कमरा मिल गया।"

"क्या 'पहली' मंजिल पर!! पहली मंजिल पर तो हम वर्षों से रह रहे हैं। बाहर जाकर कुछ तो 'चेंज' होना चाहिए। कुछ ऊपर ठहराइये"- एकाएक मुझे पंडितजी याद आ गये।

हमारी पत्नी व बच्चों ने हमें फिर एक बार ऐसे देखा जैसे पहचानने की कोशिश कर रहे हों। खैर उन्होंने सोचा होगा, अब बिल्ली के गले में घण्टी कौन बाँधे। चौथे मंजिल के कमरे में घुसते ही हम चारों सदस्य कटे पेड़ों की तरह औंधे मुंह पलंग पर गिर पड़े और लगभग दस मिनट तक मुर्दे की तरह हिले भी नहीं।

दूसरे दिन हम सभी टैक्सी से बेहद खूबसूरत नीले पानी वाले "कोलाबा बीच" पहुँचे। वहाँ सैकड़ों सैलानी सपरिवार पानी में भिन्न-भिन्न खेल-खेलकर आनंद ले रहे थे। मैं भी संदेश और आकृति के साथ समुद्र की ओर दौड़ पड़ा। वैसे भी समुद्र के कारण ही तो लोग गोवा घूमने जाते हैं। अचानक एक स्थान पर मेरे पैर किसी अड़ियल घोड़े की तरह जहाँ के तहाँ रुक गए। मुझे 'प' से 'पानी' याद आ गया और मैं पंडितजी की चेतावनी का ध्यान आते ही वापस मंजू के पास आकर बैठ गया और ललचाई नजरों से सैलानियों को पानी में खेलते हुए देखने लगा।

कुछ देर बाद संदेश और आकृति वापस आए और बोले- "पापा। आप तो समुद्र में नहाने के बड़े शौकीन हैं। क्या इतना सारा पानी देखकर डर गए।" मैं शांत रहा क्योंकि वास्तविकता बताकर मैं उनकी नजरों में और बड़ा डरपोक नहीं बनना चाहता था।

बच्चे तैयार होकर बोले "पापा। चलो चाट खाते हैं।"

"हाँ, हाँ चलो। मुझे भी बहुत जोर की भूख लगी है"- इतना कहकर हम तुरंत एक चाटवाले के पास पहुँच गए।

"क्यों भई। क्या-क्या बना रहे हो। भैया, सुबह से कुछ नहीं खाया। पेटभर कर चाट खिला दो"- मैं चाटवाले से क्षणिक संबंध बनाता हुआ बोला।

"बहुत कुछ है बाबू साहब। पावभाजी है, पानी पूरी है, पालक-पपड़ी है और सबसे बढ़िया है, पनीर के पकौड़े"- बोलो क्या दे दूँ।

"तो फिर सभी एक-एक प्लेट दे दो, परन्तु..... देना बस तीन जगह"- मुझे पुनः पंडितजी की चेतावनी याद आ गई क्योंकि उस चाटवाले के सभी आयटम 'प' अक्षर से ही शुरू होते थे। इस बार मेरे परिवार के साथ उस चाटवाले ने भी मेरे थोबड़े को घूरकर देखा। मैं ललचाई नजरों से अपने परिवार को चाट खाते हुए देखता रहा। खाते-खाते वे और भुगतान करते समय मैं पसीने से लगभग लथपथ हो गया।

"पापा। पसीना बहुत आ रहा है, चलो कोल्ड ड्रिंक पीएंगे। आपने तो चाट भी नहीं खाई। क्या मिर्ची देखकर डर गए"- मेरी पुत्री आकृति चुटकी लेकर बोली।

"नहीं बेटा डरा नहीं, मेरे पेट में एकाएक गुड़गुड़ होने लगी थी"- मैंने बहाना बनाया और "कोल्ड ड्रिंक" वाले के पास पहुँचते ही बोला - "बहुत गर्मी लगी है भैया। प्राण निकलने से पहले ही चार कोका-कोला दे दो।"

"कोका कोला नहीं है साहब । बस पेप्सी है"- दुकानदार बोला।

"पैप्सी ही दे दो, परंतु...... तीन ही देना। मुझे पुनः पंडितजी की चेतावनी याद आ गई।

"क्यों। अब पैप्सी भी नहीं पियोगे क्या" मेरी पत्नी लगभग नाराज होती हुई बोली।

"नहीं पीनी तो नहीं पीनी। कोई जरूरी है क्या। मुझे कुछ हो गया तो तुम्हें क्या"- मैं मन ही मन उस दुकानदार और पंडितजी को ऐसी भद्दी-भद्दी गालियाँ देने लगा, जिसे चाहकर भी यहाँ लिख नहीं सकता, वरना जरूर लिखता।

जैसे-तैसे मैंने पत्नी और न जाने किन-किन अपरिचितों की डॉट-फटकार सहन करके गोवा में पाँच दिन व्यतीत किए। इन पाँच दिनों में मैंने "पर्यटन विशेषांक" देने वाले अखबार के हॉकर तथा 'प' से सावधान रखने वाले पंडित वृन्दावन लाल शर्मा, वृन्दावन वालों को हजारों गालियाँ दीं और हजारों बार कोसा।

हम अपने घर रात को पहुँचे। मैंने चैन की साँस ली। नहा-धोकर मैं आराम से लेट गया। लगभग ग्यारह बजे टेलीफोन की घंटी घनघना उठी। मैंने रिसीवर उठाकर कहा- "हैलो। कौन बोल रहा है।"

"यजमान। मैं पंडित वृन्दावन लाल शर्मा बोल रहा हूँ"- दूसरी ओर से आवाज आई।

"हाँ कहिए पंडितजी"- मैंने उत्सुकता से पूछा।

"यजमान। मुझसे एक त्रुटि हो गई। बेटा 'प' अक्षर तुम्हारी राशि के लिये नहीं बल्कि 'कुंभ' राशि वालों के लिए अशुम है-" इतना कहकर पंडितजी ने फोन रख दिया।

मैं न जाने कितनी देर तक हाथ में रिसीवर लिए हुए खड़ा रहा और सोचने लगा कि मेरे लिए तो 'प', "पर्यटन विशेषांक" ही अशुभ है। सोचते-सोचते मैं न जाने कब सो गया। सुबह पेपरवाले की आवाज सुनकर मैंने दरवाजा खोला। मुझे देखते ही पेपर वाला बोला- "सर, पर्यटन विशेषांक का दूसरा अंक आ गया है। पिछली बार की तरह यह भी दे दूँ।"

"अब जा रहा है कि नहीं तू यहाँ से। तेरे इस "पर्यटन विशेषांक" के कारण ही तो पिछले दस दिन मैंने नर्क में काटे हैं" मैं पेपर वाले को धक्का देते हुए बोला।

मध्यम-वर्गीय परिवार

लेख

सुश्री दीप्ती वर्मा
कनिष्ठ अनुवादक

मध्यम वर्ग उन लोगों का समूह है जो आय, शिक्षा और जीवनशैली के मामले में उच्च और निम्न वर्गों के बीच आते हैं। भारत में, पिछले कुछ वर्षों में मध्यम वर्ग काफ़ी बढ़ा है, और कई लोग मध्यम वर्गीय परिवारों से आते हैं। मध्यम वर्ग के लोग आमतौर पर ऐसे परिवारों से आते हैं जो शिक्षा को महत्व देते हैं और इसे अपने जीवन में प्राथमिकता देते हैं। उन्हें उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है और अक्सर उन्हें गुणवत्तापूर्ण स्कूलों और शैक्षिक संसाधनों तक पहुँच मिलती है।

हम वो लोग हैं जो मध्यमवर्गीय परिवार से ताल्लुक रखते हैं, जिनके पास जो है उसी में खुशी है। छोटी-छोटी चीज़ें भी ज़िंदगी में ढेर सारी खुशियाँ ला सकती हैं। लेकिन साथ ही, वे अपनी ख़रीदी हुई चीज़ों को लेकर बहुत ज़्यादा रक्षात्मक होते हैं। वे चीज़ों का एक बच्चे की तरह ख्याल रखते हैं और तब तक उसका इस्तेमाल करते हैं जब तक उसे फेंकने के अलावा कुछ और हासिल न हो जाए। भारत में एक मध्यमवर्गीय व्यक्ति होने के अपने फ़ायदे और चुनौतियाँ हैं। हालाँकि आर्थिक स्थिरता और शिक्षा तक पहुँच महत्वपूर्ण लाभ हैं, लेकिन सफल होने का दबाव भी हो सकता है और उच्च शिक्षा की लागत का बोझ भी। मध्यम वर्ग के लोगों को सांस्कृतिक विभाजन को पार करना होगा और ऐसा करियर चुनना होगा जो उनकी रुचियों के अनुरूप हो। एक मध्यमवर्गीय व्यक्ति होने की विशेषताओं और प्रभाव को समझकर, व्यक्ति सोच-समझकर फ़ैसले ले सकते हैं और एक संतुष्ट जीवन जी सकते हैं।

> हमारे घर में कड़ी मेहनत करना एक अवधारणा नहीं थी यह जीवन जीने का तरीका था। धनार्जन करना कोई संस्कार नहीं था, यह एक अपेक्षा थी और बड़े होने का एक अनिवार्य हिस्सा था। मध्यम वर्गीय परिवार में बचपन से ही यह समझ बैठा दी जाती है कि कुछ भी आसानी से नहीं मिलता।

मध्यम वर्गीय परिवार में पले-बढ़े होने को आप आसानी से नहीं भूल सकते है। जिन अनुभवों से हम गुजरते हैं, जिन मूल्यों को हम सीखते है जिन संघर्षों का हम सामना करते हैं, वे सभी हमारे जीवन पर एक अमिट छाप छोड़ते है जो हमें आज एक व्यक्ति के रुप में आकार देते हैं। लेकिन कभी-कभी जब हम पीछे मुड़कर नहीं देखते हमें यह एहसास नहीं होता कि हमारे पालन-पोषण ने हमें किस प्रकार प्रभावित किया है। यह प्याज की परतों के छीलने जैसा है प्रत्येक परत हमारी पहचान के एक नए पहलू को उजागर करती है जिसे हमारे अतीत ने ढाला है।

हमने अपने माता-पिता को बिलों के प्रबंधन में उलझे हुए तथा कहां कटौती करनी है इस बारे में कठिन निर्णय लेते हुए देखा होगा, लेकिन यह सब बुरा नहीं था। दरअसल, इसने हमें कुछ बेहद अनमोल सबक सिखाए। हमने कठिन रास्ते से सीखा है कि धन मायने रखता है और थोड़ी सी बचत भी बहुत मददगार हो सकती है। यह सिर्फ धन प्रबंधन नहीं है, यह संसाधन-शीलता, लचीलापन और धैर्य है ऐसे गुण जीवन भर हमारे काम आते है।

मध्यम वर्गीय परिवारों में बाहर खाना दुर्लभ था। रसोईघर घर का हृदय होता था और जो घर में बने भोजन की सुगंध से भरा रहता था। माता-पिता बजट अनुकूल भोजन तैयार करने में माहिर हो गए, जिससे पूरे परिवार का पेट भरा जा सके। यह थोड़े से प्रयास से बहुत कुछ हासिल करने तथा सस्ती सामग्री को स्वादिष्ट संतोषजनक व्यंजनों में बदलने के बारे में था और यही अनुभव अक्सर घर में बने भोजन के प्रति आजीवन प्रशंसा का कारण बनता है।

मध्यम वर्गीय परिवारों को अक्सर अप्रत्याशित व्यय, अस्थिर आय और सदैव बनी रहने वाली अनिश्चितता से निपटना पड़ता है। समय के साथ, हम जिस भी परिस्थिति में हो, उसमें अनुकूलन करना और उसका सर्वोत्तम उपयोग करना सीख जाते हैं। जीवन जैसा भी है उसे वैसा स्वीकार करने की, अप्रत्याशितता से घबराने से नहीं यह क्षमता दुनिया

में आगे बढ़ने का एक शक्तिशाली साधन बन जाता है।

हमारे घर में अगर कुछ टूटा-फूटा होता था तो हम उसे ठीक कर देते थे। यदि हमें किसी चीज की आवश्यकता होती, तो हम उसे खरीदने से पहले स्वयं बनाने का प्रयास करते हैं। मध्यम वर्ग का मंत्र- “जब आप स्वयं कुछ कर सकते है तो क्यों खरीदें”, मेरे पालन पोषण का एक बड़ा हिस्सा था।

मध्यम वर्गीय परिवार में विलासिता वह नहीं होती जिसके बारे में हम आमतौर पर सोचते हैं। यह डिजाइनर कपड़ों, शानदार कारों या नवीनतम गैजेट्स के बारे में नहीं था। इसके बजाय, विलासिता की चीजें एक नई किताब, स्थानीय मनोरंजन पार्क में परिवार के साथ सैर, या किराने की दुकान से मनपंसद उपहार जैसी चीजें थी। ये छोटी-छोटी बातें बहुत खुशी और मूल्य रखती थी, क्योंकि ये रोजमर्रा की घटनाएं नहीं थी। ये किसी भी उच्च स्तरीय वस्तु की तुलना में कहीं अधिक विशेष और प्रिय थी।

मध्यम वर्गीय परिवारों में माता-पिता अक्सर अपने बच्चों को शैक्षणिक रुप से उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं क्योंकि वे शिक्षा को वित्तीय कठिनाई से बाहर निकलने का सबसे अच्छा तरीका मानते हैं। उनका मानना है कि अच्छी शिक्षा बेहतर रोजगार के अवसर और वित्तीय सुरक्षा के द्वार खोल देती है। शिक्षा को प्राथमिकता देने से मध्य वर्गीय पृष्ठभूमि के व्यक्ति आजीवन शिक्षार्थी बन जाते हैं। वे ज्ञान के मूल्य को समझते है और यह भी कि यह किस प्रकार किसी के जीवन को बदल सकता है।

हमारे घर में कड़ी मेहनत करना एक अवधारणा नहीं थी यह जीवन जीने का तरीका था। घर के काम केवल पूरे किए जाने वाले कार्य नहीं वे जिम्मेदारी और आत्मनिर्भरता के पाठ थे। धनार्जन करना कोई संस्कार नहीं था, यह एक अपेक्षा थी और बड़े होने का एक अनिवार्य हिस्सा था। मध्यम वर्गीय परिवार में बचपन से ही यह समझ बैठा दी जाती है कि कुछ भी आसानी से नहीं मिलता। हम सीखते हैं कि जो हम चाहते हैं उसे पाने के लिए हमें मेहनत करनी होगी चाहे वह नया वीडियो गेम हो, नवीनतम स्मार्टफोन हो या फिर कालेज की शिक्षा हो।

मध्यम वर्गीय परिवार में बड़े होने से यह हमें जीवन की सरल चीजों की सराहना करना, कड़ी मेहनत और जिम्मेदारी को महत्व देना तथा समुदाय के महत्व को समझना सिखाता है।

मध्यम वर्ग को अक्सर सामाजिक गतिशीलता के एक पड़ाव के रूप में देखा जाता है, जहाँ छात्र कड़ी मेहनत और शिक्षा के माध्यम से उन्नति प्राप्त कर सकते हैं। मध्यम वर्ग के लोगों को अपने सपनों को साकार करने और अपने लक्ष्यों तक पहुँचने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

मध्यम वर्ग के व्यक्ति अक्सर सफल होने और अपने लक्ष्य हासिल करने का दबाव महसूस करते हैं। उनके परिवार और समाज उनसे बहुत ज़्यादा उम्मीदें रखते हैं, जिससे तनाव और चिंता बढ़ सकती है। आर्थिक रूप से स्थिर होने के बावजूद, मध्यम वर्ग के लोगों को अभी भी शिक्षा की लागत, जैसे ट्यूशन फीस, किताबें और अन्य खर्चों का बोझ महसूस होता है। उन्हें अपना गुज़ारा चलाने के लिए अंशकालिक नौकरियां करनी पड़ सकती हैं, जिसका असर उनके जीवन और समग्र स्वास्थ्य पर पड़ता है।

मध्यम वर्ग के लोगों को अपने पालन-पोषण और शिक्षा के बीच सांस्कृतिक विभाजन को समझना मुश्किल होता है। वे अपने पारंपरिक मूल्यों और आधुनिक समाज की अपेक्षाओं के बीच फँसे हुए महसूस करते हैं, जिससे पहचान संबंधी समस्याएँ पैदा हो जाती हैं।

मध्यम वर्ग के लोगों पर आर्थिक रूप से लाभदायक करियर चुनने का दबाव होता है, भले ही

वे उनकी रुचियों से मेल न खाते हों। इससे उनके करियर विकल्प सीमित हो जाते हैं और जीवन में उनकी समग्र संतुष्टि प्रभावित होती है।

आर्थिक समस्या, यह एक मध्यमवर्गीय व्यक्ति के सामने आने वाली सबसे आम समस्याओं में से एक है। मंदी की गिरती अर्थव्यवस्था और किराने के सामान से लेकर पेट्रोल तक, हर चीज़ की लगातार बढ़ती कीमतों के साथ, कोई कुछ अलग की उम्मीद कैसे कर सकता है? एक मामूली वेतन के साथ, जो बिजली के बिल और करों को भी मुश्किल से चुका पाता है, मध्यमवर्गीय व्यक्ति को हर कदम पर बाधाओं का सामना करना पड़ता है क्योंकि उसके पास न तो पैसा बचा है, बचत करने के लिए, और न ही कुछ खरीदने के लिए; ऋणों पर ब्याज दरें चरम सीमा को पार कर रही हैं, बीमा प्रीमियम पहले कभी इतने महंगे नहीं रहे, इसलिए अब मध्यमवर्गीय व्यक्ति खुद को कर्ज, बंधक और ऋण में डूबा हुआ पाता है।

आज हर चीज़ के साथ-साथ, शिक्षा भी महंगी हो गई है। अपने बच्चों के लिए एक अच्छी शिक्षा एक ऐसी चीज़ है जिसके बारे में सभी माता-पिता सोचते हैं। ज़्यादातर बच्चे जो प्रतिष्ठित कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में जाते हैं, उन्हें लगता है कि प्रसिद्ध निजी स्कूल, ट्यूशन, कोचिंग क्लासें वगैरह ज़रूरी हैं। इसके अलावा, अनिवार्य पिकनिक, औद्योगिक दौरे, अन्य वार्षिक कार्यक्रमों की फीस आदि के रूप में अतिरिक्त खर्च भी होते हैं। लेकिन ज़्यादातर मध्यमवर्गीय बच्चों को सरकारी स्कूलों में ही जाना पड़ता है और जब तक कि वह बहुत सस्ता न हो, तब तक उनकी ट्यूशन फीस नहीं ली जा सकती। उत्कृष्ट शैक्षणिक रिकॉर्ड के बावजूद, आर्थिक तंगी के कारण छात्रवृत्ति के बिना सर्वश्रेष्ठ कॉलेज उनकी पहुँच से बाहर हैं। गंभीर परिस्थितियों में माता-पिता को अपने बच्चों की शिक्षा के लिए अपनी संपत्ति जैसे गहने भी बेचने पड़ते हैं।

ज़्यादातर मध्यमवर्गीय लोगों के पास चिकित्सा बीमा नहीं होता। हर डॉक्टर दयालु नहीं होता, हर क्लिनिक शुल्क माफ नहीं करता। फिर क्या होगा अगर कोई दुर्भाग्यपूर्ण दुर्घटना हो जाए या किसी की स्वास्थ्य स्थिति खराब हो और इलाज का खर्च उसकी क्षमता से कहीं ज़्यादा हो। होता यह है कि वे सर्वश्रेष्ठ अस्पतालों और क्लिनिकों में नहीं जाते, उन्हें सर्वोत्तम उपचार और ऑपरेशन नहीं मिलते। क्या आप ऐसी परिस्थितियों से जुड़े जोखिमों की कल्पना भी कर सकते हैं? अगर आपको अपने बीमार बच्चे का सर्वोत्तम उपचार न मिल पाए, तो आप क्या कर सकते हैं? एक आम आदमी को हर दिन इसी तरह का सामना करना पड़ता है। नवीनतम तकनीक के साथ तालमेल बिठाने का दबाव भी एक मध्यमवर्गीय परिवार के सामने एक नई समस्या है। नौकरीपेशा लोगों के पास स्मार्टफोन और लैपटॉप होना ज़रूरी है क्योंकि यह उनके काम का हिस्सा बन गया है। साथ ही, जो माता-पिता अपने बच्चों को अच्छे स्कूलों में पढ़ा पाते हैं, उन्हें ई-लर्निंग जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है जिसके लिए टैबलेट या स्मार्टफोन ज़रूरी है। मैं तकनीक या स्कूल की नीतियों के ख़िलाफ़ नहीं हूँ, लेकिन इन सबका भारतीय मध्यमवर्गीय परिवार पर निश्चित रूप से प्रतिकूल आर्थिक प्रभाव पड़ता है। अभी भी हाई-फाई लैपटॉप, स्मार्ट टेलीविज़न सेट, माइक्रोवेव ओवन जैसी चीज़ें हैं जिन्हें वे वहन नहीं कर सकते।

एक औसत मध्यमवर्गीय परिवार पर कोई ध्यान नहीं देता। एक मध्यमवर्गीय परिवार के व्यक्ति को नजरअंदाज किया जाता है। इसके अलावा, उनके मन में हमेशा तनाव बना रहता है। ऊपर कही गई सभी बातें न सिर्फ़ परिवार के बड़ों को, बल्कि बच्चों को भी परेशान करती हैं। कड़ी मेहनत करने और ज़्यादा कमाने की उम्मीद, अपने माता-पिता के सपनों को पूरा करने की, मध्यमवर्गीय परिवार के बच्चों को हमेशा तनाव में रखती है। आखिरी बात ने मेरे दिमाग में एक बात ला दी। मैं यहाँ उन सपनों की बात नहीं कर रही हूँ जो हम सातवें आसमान पर होते हुए देखते हैं। नहीं, मैं जिन सपनों की बात कर रही हूँ, वे हम सभी के भविष्य, हमारी महत्वाकांक्षाओं, हमारे लक्ष्यों, और हम किसी दिन क्या बनना चाहते है और खुद को कहाँ देखना चाहते हैं, के बारे में होते हैं। एक मध्यमवर्गीय व्यक्ति ऐसा नहीं कर सकता क्योंकि अगर वह ऐसा करता है तो उसे ढेर सारी निराशाएँ, दिल टूटने और अहंकार को ठेस पहुँचाने वाली चीज़ों से जूझना पड़ेगा और फिर से उसका व्यावहारिक जीवन और कठिनाइयाँ उसे ज़मीन पर ला खड़ा करेंगी।

नेकी के शार्टकट

हास्य व्यंग्य

श्री रूपेन्द्र कुमार कौशल
कनिष्ठ अनुवादक

उर्दू में नेकी कहें, हिंदी में भलाई या फिर अंग्रेजी में चैरिटी, इन शब्दों का हर धर्म, सम्प्रदाय और सभ्यता में विशेष महत्व रहा है। कोई भी धार्मिक ग्रंथ उठा लीजिए या 'विक्रम-बेताल', 'सिंहासन बत्तीसी' और 'पंचतंत्र की कहानियां' जैसा कोई दंतकथा संग्रह ले लीजिए, बुरे चरित्र या खलनायक को नायक के चरित्र से कुछ अलग करता है तो वो है उसकी नेकी। और दूर क्यों जाते हैं, राजामौली की कीर्तिमान स्थापित करने वाली फिल्म बाहुबली का नायक भी अपनी नेकी के कारण ही राजगद्दी का अधिकारी माना गया है। यदि वो नेकी न करता तो वो यह कभी नहीं कह पाता "मेरा वचन ही है शासन।"

व्यक्तिगत लाभ को भुला कर समाज के विषय में सोचने वालों को श्रेष्ठ स्थान देने का गुरुजनों का निर्णय इस बात को ध्यान में रखते हुए दिया जाता है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज के बिना एकल का कोई अस्तित्व नहीं होता, और दूरदर्शी इस बात को भली भांति जानते हैं। नेक होने का दावा या दिखावा अपने-अपने स्तर पर हर कोई कर लेता है। लेकिन आज से कुछ समय पहले तक भलाई के काम अलग-अलग समीकरणों से तय होते थे, क्योंकि हर किसी की अपनी गिनती होती है और उस गिनती के अनुसार हर भले काम के बदले कुछ पा सकने की अपेक्षा। न जाने कितने तरह के फलों का लालच देने के बाद ही कोई "कर्म कर, फल की इच्छा मत कर" जैसे सुवचन सुनाता है।

लेकिन कौन सा तबका सबसे ज्यादा नेकी करता था या कर पाता था? आर्थिक आधार पर समाज के बंटवारे को देखें तो मध्यम वर्ग का विचित्र प्राणी सबसे ज्यादा नेक होते हुए भी नेकी नहीं कर पाता था। जहाँ ग़रीब का सारा पुरुषार्थ दो वक्त की रोटी जुटाने के लिए होता है, अमीर के पास खाने की टेबल पर सब कुछ होता है, भूख के सिवा। इन दोनों किनारों के बीच अटका हुआ हमारा मध्यम वर्ग, न सिर्फ दो वक्त की रोटी का इंतजाम करके चलता है बल्कि सप्ताह में एक बार की बोटी, या शाकाहारी है तो पनीर, भी उसके मेन्यु में होती है। ये सप्ताह में एक बार का पनीर मध्यमवर्गीय लोगों के लिए दो वक्त की रोटी से भी ज्यादा मायने रखता है। उसे पता है कि इससे ज्यादा कुछ कर पाता तो अभी तक बिल गेट्स बन चुका होता। लेकिन इससे कम में समझौता भी उसे मंजूर नहीं। ग़रीब का क्या है, वो तो एक दिन और भूखा रह लेता है और अपने साथी की मदद कर देता है, या एक डिनर के बदले मंदिर में चढ़ावा चढ़ा देता है, क्योंकि इहलोक की भूख की पीड़ा को वो परलोक में साथ नहीं ले जाना चाहता। वहीं उच्च वर्ग के महानुभावों के पास जायज-नाजायज़ तरीके से कमाए धन की कोई कमी नहीं होती। कभी अपने पापों को कटवाने के लिए, तो कभी इनकम टैक्स विभाग को चकमा देने के लिए, अमीर का पैसा चैरिटी में लगता ही रहता है। और अगर इनमें से भी कोई वजह नहीं है, तो भी अहम की पुष्टि करने के लिए, खुद को श्रेष्ठ एवं ईश्वर तुल्य दिखाने के लिए भी धनवान पैसे तो खर्च करेगा ही। धनवान की नेकी मंदिरों में 11 रुपये का प्रसाद नहीं चढ़ाती, बल्कि आलीशान मंदिर ही बनवा देती है।

> इस धरा पर एक ऐसा चमत्कार हुआ जिससे इस मध्यमवर्गीय भले मानस की तकदीर ही बदलने वाली थी, इस भूमंडल पर अमेरिकी महाद्वीप पर एक पुण्यात्मा का अवतरण हुआ और वह अपने मध्यम वर्ग के लिए जादू का पिटारा लेकर आया अपना जुकरबर्गवा। अरे वहीं फेसबुक वाला!!

अब वापस आते हैं अपने मध्यमवर्गीय व्यक्ति के पास। अगर वो अपनी सामर्थ्य के अनुसार दान करने लगे तो उसके पनीर का बजट डगमगा जाता है, और बिना कुछ खर्च किए किसी की श्रम से या फिर केवल मौखिक सहायता करने का समय भी निकालता है तो घर पहुंचने में देर हो जाएगी, और पनीर ठंडा होकर बेस्वाद हो जाएगा। न जाने क्यूँ, ईश्वर ने इस बेचारे मध्यम वर्गीय को अमीर नहीं बनाया। वो भी अपने भले मन से खूब भलाई करता। ईश्वर और तकदीर के सिर पर चुपचाप अपना ठीकरा फोड़ते हुए ये भला मानस केवल रोटियां तोड़ने में

व्यस्त रह जाता है। ये सिलसिला आज से 15-20 सालों पहले तक यूं ही चलता रहा। दुनिया में आई इंटरनेट क्रांति भी हमारे मध्यमवर्गीय भले मानस के लिए कुछ नहीं लेकर आई।

बस पिताओं की अपने बेरोजगार बेटे-बेटियों को नए कंप्यूटर कोर्स कराने की जिम्मेदारी बढ़ गई। लेकिन तब इस धरा पर एक ऐसा चमत्कार हुआ जिससे इस मध्यमवर्गीय भले मानस की तकदीर ही बदलने वाली थी, इस भूमंडल पर अमेरिकी महाद्वीप पर एक पुण्यात्मा का अवतरण हुआ और वह अपने मध्यम वर्ग के लिए जादू का पिटारा लेकर आया अपना जुकरबर्गवा। अरे वही फेसबुक वाला!! फेसबुक के आने से मध्यम वर्ग के पास नेकी करने के शॉर्टकट आ गए। बस एक क्लिक और काम खत्म, पनीर की कुर्बानी दिए बिना एक से बढ़कर एक भलाई के काम हो जाते हैं इस फेसबुक पर "हींग लगे ना फिटकरी, रंग भी चोखा होय"। देखिए न, किसी बीमार बच्ची के दिल में छेद हो तो प्रति लाइक या शेयर पर कुछ पैसे उस बच्ची के इलाज के लिए मार्क जुकरबर्ग देते हैं। हम तो भलाई के ठेकेदार हैं, लाइक और शेयर दोनों कर देते हैं ताकि बच्ची को दोगुना पैसे मिलें। अपने पास से एक धेला खर्च नहीं हुआ और वहाँ किसी का मुफ्त में इलाज हो गया। इससे अच्छा शॉर्टकट क्या हो सकता था। और तो और, यहाँ पुण्य कमाने के भी शॉर्टकट मौजूद हैं। देवी-देवताओं या साईं बाबा की बहुत सी ऐसी तस्वीरें लोगों ने डाल रखी हैं जिनको लाइक या शेयर करने से पुण्य की प्राप्ति होती है। जो भी पहली बार ऐसी किसी तस्वीर को डालता है उसके पास उस संबंधित ईश्वर ने स्वयं स्वप्न में आकर इस बात की पुष्टि की होती है, इसलिए शंका का तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता और यदि प्रश्न उठता है तो उसे संबंधित ईश्वर आकर प्रश्नों के उत्तर स्वयं देते हैं। नहीं तो जगह-जगह ऐसी सांसर्गिक संस्थाएं हैं जो ऐसे सवाल उठाने वालों का बहुत भला कर देती हैं। खैर उस बात को जाने देते हैं, जहां पीड़ा होने की संभावनाएं ज्यादा हो।

इसी तरह बैठे बिठाए फेसबुक के एक शेयर से किसी खोए हुए बच्चे को चुटकियों में ढूंढ लिया जाता है। मुझे याद है बचपन में छोटी बहन रास्ता भटक गई थी तब पूरे गांव के लोग खोजने में जुट गए थे। उसका पिता साइकिल पर ही कई हजार किलोमीटर ढूंढने के लिए निकल गया था। लेकिन क्या करें, उस समय तब फेसबुक नहीं था ना। अब तो फेसबुक पर भलाई करने की ऐसी आदत हो गयी है कि 5 मिनट के एक सेशन में कम से कम 10 भले काम करने होते हैं। हाल के कुछ वर्ष पहले ही एक चार साल का बच्चा गुम हो गया था जो 03 दिन बाद ही माँ-बाप को वापस मिल गया। लेकिन उन तीन दिनों में ही किसी शुभचिंतक टेक-सेवी ने फेसबुक पर बच्चे के गुम होने की पोस्ट बना कर डाल दी। सुना है पिछले साल वो बच्चा 11 का हुआ तो अपना फेसबुक प्रोफाइल बनाने के बाद सबसे पहली नेकी के तौर पर उसने खुद के ही गुम होने वाली पोस्ट शेयर की। शॉर्टकट में नेकी करने वालों ने उस पोस्ट को तबतक जिंदा रखा था। क्या करें, यहाँ भी प्रतियोगिता इतनी बढ़ गई है कि गुमशुदा की पोस्ट कम पड़ती हैं। फेसबुक पर सब-कुछ ठीक ही चल रहा था लेकिन वो मज़ा नहीं आ पा रहा था। एक बार फेसबुक लॉगिन करो तो ऊपर से नीचे तक स्क्रॉल के दौरान कुछ ऐसी भी पोस्ट नज़र आ जाती थीं जिनमें दिमागी कसरत करनी पड़ती थी। तर्कों को आधार बनाकर आंकड़ों के साथ कुछ भी संजीदा लिखा हो तो उसे समझने में कितनी मेहनत करनी पड़ती है। इस सब में भलाई का काम तो मार खा रहा था। सोचने-समझने और तर्क करने जितनी ऊर्जा कहाँ बची होती है दो रोटी और पनीर का इंतजाम करने के बाद।

फिर आया एक और तारणहार मसीहा, नेकी करने वालों के लिये रामबाण, इसका नाम लोगों ने व्हाट्सएप दिया था। यहाँ आने से पहले आप अपना दिमाग ताले में बंद करके आ सकते हैं। और फिर नेकी तो दिल से होती है। इसमें दिमाग़ का क्या काम! यहाँ विकल्पों की कोई कमी नहीं है। व्हाट्सएप पर देवी-देवताओं, के 20 मेगापिक्सेल के DSLR से खींची हुई फ़ोटो से लेकर अश्वत्थामा विरचित गीता तक, बाइबिल इत्यादि ग्रंथों के कोट्स, कैंसर को जड़ से मिटा सकने वाले घरेलू नुस्खे से लेकर दुनिया के सबसे बड़े हृदय विशेषज्ञ की सलाह तक और मुफ्त में 50000 रुपये कमाने के मौके

से लेकर बाबा बड़बोलानंद के आशीर्वाद तक सब कुछ सहज उपलब्ध है। ये थोड़े से लालची, थोड़े आलसी पर बहुत ही नेकदिल वाले मध्यम वर्ग के लिए बिलकुल उपर्युक्त साधन सिद्ध हुआ। व्हाट्सएप एक ऐसा शॉर्टकट है जिससे अपनी डिनर टेबल पर बैठा हुआ एक औसत मध्यम वर्गीय दिन भर की नेकी का कोटा पूरा कर लेता है। आपाधापी वाले जीवन में सत्य की परख करने का समय किसके पास है। बस ये नेकी वाले संदेश एक फोन से दूसरे फोन, एक ग्रुप से दूसरे ग्रुप में भेजे जाते रहते हैं। इन्हें भेजने वाले वो हैं जो होमियोपैथी में विश्वास रखते हैं। दवा खा लो, फायदा नहीं तो कोई नुकसान भी नहीं होगा। वैसे ही, मैसेज भेज दो, फायदा नहीं तो कोई नुकसान भी नहीं है। एक बटन दबाने से अगर भलाई करने की अपनी सारी भड़ास निकल जाती है तो हर्ज ही क्या है? कम से कम व्हाट्सएप की आभासी दुनिया बाहर की दुनिया जितनी क्रूर नहीं है, झूठी ही सही, बनावटी ही सही, यहाँ नेकी ज़िंदा है। ये आभासी दुनिया एक संघर्षरत मध्यमवर्गीय के पनीर की थाली में चुपके से डोपामाइन या आनंद के हॉर्मोन का छौंक लगा देती है और यही डोपामाइन बेच कर जुकरबर्ग दुनिया के सबसे अमीर लोगों में शुमार हो गए। लेकिन नेकी के और नए तरीके भी तो निकालने थे, तो आया इंस्टाग्राम, यूट्यूब जिन्होंने न केवल नेकी करने के नए-नए तरीके दिए अपितु लोगों को रोजगार तक दिए, सुना है सब इन्फ्लूएंसर बने घूम रहे है, कोई छोटा तो कोई बड़ा।

नेकी के तरीके भी अलग-अलग, पहला तरीका है "नेकी विद लाइव स्ट्रीम": अगर आप किसी गरीब को खाना खिला रहे हैं, तो सबसे पहले अपने फोन का कैमरा ऑन करें। सही एंगल से शूट करना जरूरी है—भले ही वह व्यक्ति खाने से पहले थोड़ी देर भूखा बैठा रहे। एक प्रेरणादायक कैप्शन जोड़ें: "हम सबको इंसानियत निभानी चाहिए! #ब्लेस्ड #काइंडनेस मैटर्स" और अब इंतजार करें—लाइक्स और कमेंट्स की बारिश होगी।

दूसरा तरीका - "नेकी विद चैलेंज": नेकी अब ट्रेंडिंग चैलेंज का हिस्सा बन गई है! "पांच लोगों को खाना खिलाएं और उन्हें टैग करें" चैलेंज में भाग लें। एक स्टाइलिश वीडियो बनाएँ, एडिटिंग में प्रेरणादायक बैकग्राउंड म्यूजिक डालें, और लोगों को नेकी करने के लिए चैलेंज करें। जो इस चैलेंज में भाग नहीं लेते, वे स्वाभाविक रूप से गैर-समाजसेवी समझे जाते हैं!

तीसरा तरीका - "नेकी विद इंस्टाग्राम स्टोरी": यदि आपकी नेकी तुरंत पोस्ट नहीं होती, तो उसका कोई अस्तित्व ही नहीं। जरूरतमंद की मदद करने के बाद, इंस्टाग्राम स्टोरी पर "फीलिंग ग्रेट!" डालना अनिवार्य है। साथ में आपकी मुस्कुराती हुई सेल्फी होनी चाहिए - नेकी करने की खुशी दर्शाने के लिए।

चौथा तरीका - "नेकी विद शॉपिंग लिंक": यदि आप किसी अनाथालय में किताबें दान कर रहे हैं, तो पोस्ट के साथ ही "इसी दुकान से किताबें खरीदें!" लिंक जोड़ना न भूलें। नेकी के साथ ब्रांड प्रमोशन भी जरूरी है, आखिर समाज सुधार के साथ थोड़ा बिज़नेस भी होना चाहिए! आखिर में अपने लिए भी तो कुछ करना है, पैसे तो वहीं से आएंगे ना।

पांचवाँ तरीका - "नेकी विद वायरल कंटेंट": नेकी को तब तक सही नहीं माना जाता जब तक वह वायरल न हो जाए। अच्छे कामों की व्यूअरशिप बढ़ाने के लिए प्रभावी हेशटैग, वीडियो एडिटिंग और इन्फ्लुएंसर प्रमोशन जरूरी है। नेकी करने के बाद उसका सोशल मीडिया एनालिटिक्स चेक करें—अगर व्यूज कम आए तो अगली बार एंगल और कैप्शन पर ज्यादा मेहनत करें।

कुल मिलाकर, नेकी अब सच्चे दिल से नहीं, बल्कि सोशल मीडिया के पैमाने से मापी जाती है। अब नेकी और इंसानियत उतनी मायने नहीं रखती जितनी फॉलोअर्स और व्यूज़!

और ये जिन्हें हम शॉर्टकट समझते हैं वो एक छलावा होता है, या एक झूठी आस, उनके लिए जो कठिन लंबे रास्ते पर या तो चलने की हिम्मत नहीं जुटा पाते या कुछ दूर चल कर थक चुके होते हैं। सवा रुपये के प्रसाद से ईश्वर को पा लेने की आस है शॉर्टकट, एक चूर्ण खाकर मृत्यु पर विजय पा लेने की उम्मीद है शॉर्टकट, बेरोजगारी से जूझते युवा के लिए शहर में अपना बंगला बना सकने के दिवास्वप्न हैं शॉर्टकट।

लेकिन असल जिंदगी में शॉर्टकट नहीं हुआ करते, न सफलता के, न संपन्नता के और न ही नेकी के।

और हाँ, जाते-जाते लाइक और शेयर बटन जरूर दबाते जाइएगा।

गर्व और शर्म: भारतीय इतिहास के औपनिवेशिक अध्ययन का मूल्यांकन

लेख

श्री विवेक सिंघल, सहायक लेखा अधिकारी

क्योंकि अंधेरे में भगवान भी अंग्रेजों पर भरोसा नहीं कर सकते! -शशि थरूर

भारत में ब्रिटिश शासन लगभग 200 वर्षों तक चला। इस अवधि के दौरान, ब्रिटिश शासक अभिजात वर्ग ने अपने विनियोग के एजेंडे को आगे बढ़ाने के लिए विभिन्न तंत्र स्थापित करने में कामयाबी हासिल की और अपने पीछे कई नवाचार छोड़े, जिनके बिना आज का जीवन अकल्पनीय लगता है। उदाहरण के लिए, आज रेलवे देश के सभी हिस्सों से 80 करोड़ यात्रियों को ले जाने के लिए जिम्मेदार है।

> पश्चिमी विद्वानों ने बहुत बड़ी मात्रा में लिखा है जिसमें उन्होंने भारत को हमेशा निरंकुश शासन का अनुभव करने वाला देश बताया है। भारत के प्रारंभिक इतिहास में उन्होंने कहा कि अपने पूरे इतिहास में भारत ने निरंकुश शासन का अनुभव किया है। दूसरे, उन्होंने भारतीयों की अपने इतिहास को रिकॉर्ड करने और व्याख्या करने की क्षमता पर भी सवाल उठाए

हालाँकि, क्या रेलवे की स्थापना का ब्रिटिश उद्देश्य नेक और सम्मानजनक था? यह निश्चित रूप से नहीं था। तत्कालीन भारतीय रेलवे का निर्माण मूल रूप से दो ब्रिटिश आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए किया गया था। पहला कारण संसाधनों के दोहन की उनकी आवश्यकता को पूरा करना था। औपनिवेशिक स्वामियों ने अपने आर्थिक हितों को सुविधाजनक बनाने और देश के भीतर बड़ी मात्रा में माल के तेज़ परिवहन की अनुमति देने के उद्देश्य से प्रमुख बंदरगाह शहरों को देश के भीतर के क्षेत्रों से जोड़ने में भारी निवेश किया, जिसे अंततः बंदरगाह शहरों के माध्यम से निर्यात किया गया।

दूसरा उद्देश्य रक्षा के दृष्टिकोण से भूमि पर एक मजबूत पकड़ बनाना था। यह महसूस किया गया कि रेलवे देश के विभिन्न भागों में होने वाले किसी भी विद्रोह को दबाने के लिए कर्मियों के तेज़ परिवहन की अनुमति देगा। हालाँकि, इसका दूसरा पहलू यह है कि रेलवे लोगों और वस्तुओं, जैसे कि खाद्यान्नों को देश के एक हिस्से से दूसरे हिस्से में अकाल से पीड़ित लोगों तक पहुँचाने में मदद कर सकता है, और इस तरह उन लोगों के हितों की सेवा कर सकता है जिन पर वे शासन कर रहे हैं, ऐसा कभी इरादा नहीं था।

ब्रिटिश दृष्टिकोण से थके हुए अध्ययन और अनुप्रयोग के क्षेत्र के विकास का एक और उदाहरण भारत के इतिहास के व्यवस्थित अध्ययन की शुरुआत और उनके शासन को वैध बनाने और उनकी श्रेष्ठता को मजबूत करने के लिए एक हथियार के रूप में इसका व्यवस्थित उपयोग था। एक राष्ट्र का अपना इतिहास होता है। और यह वह इतिहास था जिसे अंग्रेजों ने उजागर करने और बाद में बदनाम करने की कोशिश की। तथ्य यह है कि राष्ट्रीय गौरव की भावना की नींव को हिला देने के लिए जो कुछ भी बनाया गया था, वह एक स्वतंत्र राष्ट्र की मांग के पीछे प्रमुख कारणों में से एक बन गया, हालांकि यह ब्रिटिश योजना से परे था।

अंग्रेजों ने अठारहवीं सदी की शुरुआत में ही प्राचीन भारत के इतिहास में व्यवस्थित शोध शुरू कर दिया था। वे भारत के सुदूर अतीत के बारे में जानने में रुचि रखते थे और यह जिज्ञासा विभिन्न कारणों से पैदा हुई होगी। उपनिवेशवादियों का मुख्य हित ग्रेट ब्रिटेन के आर्थिक हितों को बढ़ावा देना

था। इस उद्देश्य से, उन्होंने न केवल भूमि के संसाधनों पर नियंत्रण करना चाहा, बल्कि इसके लोगों के प्रशासनिक नियंत्रण पर भी नियंत्रण करना चाहा।

हालाँकि, यह प्रभुत्व उन लोगों के जीवन के बारे में बहुत कम या बिल्कुल भी जानकारी के बिना अप्रभावी होता, जिन पर ब्रिटिश शासन करना चाहते थे। शुरुआत में, यह क्षेत्रीय प्रशासन और सामाजिक तंत्र के विनियमन में स्वदेशी सामाजिक समूहों को शामिल करके हासिल किया गया था। हालाँकि, निर्भरता चिंता का विषय थी और इसलिए औपनिवेशिक विचारकों ने भारतीय लोगों को स्वतंत्र रूप से प्रभावी ढंग से नियंत्रित करने के लिए भारत के अतीत को समझने की आवश्यकता प्रस्तुत की।

प्राचीन कानूनों और रीति-रिवाजों को समझने के प्रयासों के परिणामस्वरूप एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल (1784) की स्थापना हुई। ईस्ट इंडिया कंपनी के एक सिविल सेवक सर विलियम जोन्स इसके गठन के लिए जिम्मेदार थे। बॉम्बे की एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना 1804 में हुई और लंदन की एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना 1823 में हुई।

अठारहवीं सदी में कुछ ऐसे ग्रंथों का अनुवाद किया गया जिन्हें महत्वपूर्ण माना गया। 1776 में मनु स्मृति (मनु का कानून) का अंग्रेजी में अनुवाद *ए कोड ऑफ जेंटू लॉज़* के रूप में किया गया। जोन्स ने 1789 में अभिज्ञानशाकुंतलम का अंग्रेजी में अनुवाद किया। भगवद् गीता का अंग्रेजी में अनुवाद चार्ल्स विल्किंस ने 1785 में किया। इन ग्रंथों को प्रामाणिक माना गया और इसलिए इनका अनुवाद किया गया।

इस तरह के बड़े कार्य ब्रिटिश शासन की प्रभावशीलता को बढ़ाने के उद्देश्य से किए गए थे। हालांकि, भारत के अतीत को समझने की यह खोज जल्द ही भारतीय राष्ट्रीय चरित्र को बदनाम करने और उसी शासन को वैध बनाने के बड़े उद्देश्य में बदल गई जिसे शुरू में सुधारने की कोशिश की गई थी। अंग्रेजों ने अज्ञानी भारतीय जनता के ऊपर एक व्यक्ति और संस्कृति के रूप में अपना वर्चस्व स्थापित करने के उद्देश्य से भारतीय इतिहास को निम्नतर रूप में प्रस्तुत करने का एक सामरिक दृष्टिकोण तैयार किया।

1857 के विद्रोह ने अंग्रेजों को यह एहसास कराया कि भारत के बारे में उनकी समझ में खामियाँ हैं। इस गलती को सुधारने के लिए उनका दृष्टिकोण भारत के अतीत की प्रकृति को अच्छी तरह से समझना और समझाना था। इसके बाद, जब भारत के इतिहास और संस्कृति के अध्ययन और व्याख्या की बात आई तो अंग्रेजों ने तीन-तरफा दृष्टिकोण अपनाया। पहला, भारतीयों की खुद पर शासन करने की क्षमता पर सवाल उठाना था।

विंसेंट आर्थर स्मिथ जैसे पश्चिमी विद्वानों ने बहुत बड़ी मात्रा में लिखा है जिसमें उन्होंने भारत को हमेशा निरंकुश शासन का अनुभव करने वाला देश बताया है। भारत के प्रारंभिक इतिहास में उन्होंने कहा कि अपने पूरे इतिहास में भारत ने निरंकुश शासन का अनुभव किया है। दूसरे, उन्होंने भारतीयों की अपने इतिहास को रिकॉर्ड करने और व्याख्या करने की क्षमता पर भी सवाल उठाए और इतिहास की धारणा और समय की समझ की कमी की ओर इशारा किया। उनकी पुस्तक के कुछ अंश नीचे दिए गए हैं।

"...यह पुस्तक भारतीय छोटे राज्यों के उन भ्रमित करने वाले इतिहास की मुख्य विशेषताओं की रूपरेखा प्रस्तुत करने का प्रयास करती है, जब उन्हें कई शताब्दियों तक अपने हाल पर छोड़ दिया गया था। यह पुस्तक शायद पाठकों को यह समझने में मदद करेगी कि भारत हमेशा से कैसा रहा है, जब वह सर्वोच्च सत्ता के नियंत्रण से मुक्त हुआ था, और यदि उस उदार निरंकुश शासन का हाथ, जो अब उसे अपनी लौह मुट्ठी में जकड़े हुए है, हटा लिया जाए, तो वह फिर से कैसा होगा।"

"... भारत का राजनीतिक इतिहास इसे ग्रीस, रोम या आधुनिक यूरोप के साथ शहर या राज्य में संविधानों के विकास को दर्शाने के रूप में नहीं देख सकता है। अन्य एशियाई लोगों की तरह भारतीय भी आमतौर पर सरल निरंकुश शासन से संतुष्ट रहे हैं, इसलिए एक सरकार और दूसरी सरकार के बीच का अंतर संस्थाओं के क्रमिक विकास के परिणामस्वरूप होने वाले परिवर्तनों के बजाय कई निरंकुशों के व्यक्तिगत चरित्र और क्षमताओं में निहित रहा है। चंद्रगुप्त मौर्य, अशोक और अकबर जैसे योग्य व्यक्तिगत निरंकुश शासकों द्वारा तैयार किए गए नियम, ज्यादातर अपने लेखकों के साथ ही नष्ट हो गए हैं।

अभी जो नया भारतीय संविधान है, वह विदेशी आयात है, जिसे वे लोग ठीक से नहीं समझ पाते जिनके लाभ के लिए इसे बनाया गया है, और जिसे कभी भी पूरी तरह से आत्मसात नहीं किया जा सकता। भारतीय इतिहास की सबसे महत्वपूर्ण शाखा उसके विचारों का इतिहास है। दर्शन, धर्म, विज्ञान, कला और साहित्य के क्षेत्रों में भारतीय विचारों की कहानी को पर्याप्त रूप से

प्रस्तुत करने के लिए, देश के राजनीतिक उतार-चढ़ाव का कालानुक्रमिक वर्णन अपरिहार्य आधार है। जिन पाठकों को ऐसा वर्णन नीरस या कभी-कभी घिनौना भी लगता है, वे इस विश्वास से सांत्वना पा सकते हैं कि इसके अस्तित्व से समय के क्रम को ध्यान में रखते हुए अधिक आकर्षक विवेचन की रचना संभव हो सकेगी।" ओरिएंटल निरंकुशता के पश्चिमी राजनीतिक विचार को भी विदेशी शासन की आवश्यकता को प्रमाणित करने के लिए इस्तेमाल किया गया था। मोंटेस्क्यू जैसे विद्वानों ने एशिया को निरंकुशता के प्राकृतिक वातावरण के रूप में संदर्भित किया। इस सिद्धांत को जेम्स मिल, हेगेल, मोंटेस्क्यू, जॉन के और अन्य विद्वानों द्वारा प्रतिपादित किया गया था। यह विचार ब्रिटिश प्रशासक इतिहासकारों (एंग्लिसिस्ट) द्वारा "व्हाइटमैन के बोझ", "सभ्यता मिशन", "संरक्षकता के सिद्धांत" के सिद्धांतों से संबंधित था और इसका उपयोग भारतीय मन पर एक वैचारिक वर्चस्व थोपने के लिए किया गया था।

कई इतिहासकारों ने तर्क दिया कि उपनिवेशवादी इतिहासकारों द्वारा किए गए सामान्यीकरण कुल मिलाकर या तो झूठे थे या अत्यधिक बढ़ा-चढ़ाकर बताए गए थे तथा निरंकुश ब्रिटिश शासन को कायम रखने के लिए अच्छे प्रचार सामग्री के रूप में काम करते थे।

पश्चिमी उपनिवेशवादियों ने इस तथ्य पर जोर दिया कि प्राचीन भारतीयों के पास इतिहास की कोई धारणा नहीं थी और उन्होंने हमेशा स्वशासन के विपरीत विदेशी शासन का अनुभव किया था। ऐसी धारणाएँ भारतीय इतिहासकारों के लिए बहुत बड़ी परेशानी का स्रोत बन गईं, जो भारतीय इतिहास लेखन को विकृत होते देखकर निराश हो गए।

भारत में क्षयग्रस्त सामंती व्यवस्था की तुलना पश्चिम के प्रगतिशील पूंजीवाद से की गई। तीसरा स्वाभाविक रूप से साम्राज्यवादी शक्तियों के एजेंडे से संबंधित था जिसे आमतौर पर "श्वेत व्यक्ति का बोझ" के रूप में जाना जाता है। कई औपनिवेशिक लेखकों, दार्शनिकों और इतिहासकारों का मानना था कि यह भारत के प्राचीन धर्मों पर सवाल उठाकर भारतीय संस्कृति और राष्ट्रवाद की भावना को उखाड़ फेंकने का एक शक्तिशाली तरीका था। जब स्थानीय धर्मों के प्रति पर्याप्त संदेह और विरोध उत्पन्न हो गया, तो ईसाई धर्म को सर्वोच्च धर्म के रूप में प्रस्तुत किया गया जो व्यक्ति को बचा सकता था और इस तरह उपनिवेशवादियों या जैसा कि मैक्स मुलर ने यूरोपीय लोगों का वर्णन किया था, को एक श्रेष्ठ जाति बना दिया।

"...हमारी उन्नीसवीं सदी की ईसाईयत शायद ही भारत की ईसाईयत होगी। लेकिन भारत का प्राचीन धर्म बर्बाद हो चुका है - और अगर ईसाईयत इसमें हस्तक्षेप नहीं करती, तो इसका दोष किसका होगा?" मैक्स मूलर - ड्यूक ऑफ आर्गिल को पत्र, जॉर्जिना मूलर द्वारा संपादित द लाइफ एंड लेटर्स ऑफ राइट ऑनरेबल फ्रेडरिक मैक्स मूलर (1902) में प्रकाशित।

इस प्रकार, मृत्यु के बाद के जीवन के बारे में सोच रहे भारतीयों को अपने वर्तमान को संभालने के लिए किसी की आवश्यकता थी। कोई श्रेष्ठ, सटीक और तर्कसंगत व्यक्ति, जो वर्तमान पर नज़र रखता हो। ब्रिटिश आकाओं से बेहतर कौन हो सकता था? एक शासक की तर्ज पर एक वायसराय की नियुक्ति से इस भूमिका एकीकरण को और मजबूत किया गया, जैसा कि भारतीयों को आदत थी।

हालांकि, पहले के विपरीत, ब्रिटिश साम्राज्य का कभी भी उस राष्ट्र के साथ एक होने का इरादा नहीं था जिस पर वे शासन करना चाहते थे। वे ब्रिटिश साम्राज्य के रत्न भारत से शोषण और लाभ कमाने तक ही सीमित थे। यदि ऐसे इरादों के लिए किसी राष्ट्र के अस्तित्व पर सवाल उठाकर उसके गौरव की भावना की नींव हिलाना आवश्यक था, चाहे वह कितना भी पुराना और महत्वपूर्ण क्यों न हो, अंग्रेज जानते थे कि इस रणनीति की उपयोगिता विद्रोह में उत्पन्न होने वाले किसी भी संघर्ष की जड़ों पर दीर्घकालिक प्रभाव डालेगी।

धन : सभी बीमारियों का रामबाण इलाज?

लेख

श्री निखिलेश कुमार रजक
वरिष्ठ लेखापाल

“पैसे से आप जीवन नहीं खरीद सकते” - बॉब मार्ले

आधुनिक पूंजीवादी समाज में मनुष्य की लालसाओं का कोई अंत नहीं है और वह केवल एक ही लक्ष्य लेकर घूमता रहता है कि “जितना चाहिए उससे अधिक पाओ और जितना है उससे अधिक दिखाओ” इस कॉर्पोरेट क्षेत्र में मनुष्य दूसरों के प्रति उदासीन हो गया है, अपने साथियों के प्रति विचार खो बैठा है और वह एक मनोरोगी की तरह धन के नशे के पीछे भाग रहा है! जिसने द्वेष की भावना को परास्त कर सम्मान प्राप्त किया है, सर्वोच्च सम्मान प्राप्त किया है, कठिन कठिनाइयों का सामना किया है- जिस दुनिया ने आइंस्टीन, न्यूटन, मैरी क्यूरी जैसे दिग्गजों को जन्म लेते देखा है- जिस दुनिया ने सब कुछ जीत लिया है, लोग हर रोज अवसरों के विभिन्न महासागरों में यात्रा करते हुए मंगल, चंद्रमा और सहस्राब्दी तक सफलतापूर्वक पहुंच गए हैं, लेकिन दुख की बात है कि वे जीवन में धन और भौतिक संपत्ति के दृष्टिकोण और सापेक्ष अवधारणा को समझने में विफल रहे हैं! गुलामी के समय से लेकर इसके अस्तित्व के उन्मूलन तक, लोगों की स्थिति में काफी बदलाव आया, गुलामों से लेकर मशीनों और उसके बाद सम्माननीय नागरिकों तक, दुर्भाग्य से मानव जाति अब यू-टर्न ले रही है, और यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं हो सकती कि असली मालिक आदमी नहीं बल्कि पैसा है और आदमी चमकदार संस्थाओं का गुलाम बन गया है! किसी ने कहा है कि मनुष्य सबसे श्रेष्ठ प्राणी है क्योंकि उन्हें न केवल तर्कशक्ति से संपन्न किया गया है बल्कि उन्हें ज्ञान से भी नवाजा गया है जो इस ग्रह पर मौजूद हर प्राणी के पास नहीं है। इसी तरह, कहा गया है कि ग्रह पर सबसे उच्च प्राणी मनुष्य है क्योंकि उसके पास वे सभी पाँच इंद्रियाँ हैं जो अन्य प्राणियों की आंतरिक गतिशीलता में नहीं हैं, जिससे वह श्रेष्ठ है और सबसे ऊपर और सबसे बड़ी बात यह है कि दोनों के साथ मेरा विवाद यह है कि ज्ञान, तर्कशक्ति, पाँच इंद्रियाँ, मन से भरपूर होने के बाद भी मनुष्य अभी भी निचले पायदान पर है और पैसा और संपत्ति का आकर्षण ही श्रेष्ठ और सबका स्वामी है।

गुलामी के समय से लेकर इसके अस्तित्व के उन्मूलन तक, लोगों की स्थिति में काफी बदलाव आया, गुलामों से लेकर मशीनों और उसके बाद सम्माननीय नागरिकों तक, दुर्भाग्य से मानव जाति अब यू-टर्न ले रही है, और यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं हो सकती कि असली मालिक आदमी नहीं बल्कि पैसा है।

यह अनुमान लगाया जा रहा है कि पक्ष विपक्ष मेरे दावों को गलत साबित करने तथा मेरे शब्दों को सत्य सिद्ध करने में कोई कसर नहीं छोड़ेगा, अतः उनके द्वारा किए गए कुछ काल्पनिक दावों पर गौर करना अत्यंत आवश्यक हो जाता है:

➢ क्या आप बिना पैसे के रह सकते हैं?

➢ आप अपनी स्वयं की आवश्यकताओं को कैसे पूरा करेंगे, अपने परिवार की आवश्यकताओं की तो बात ही छोड़िए?

➢ पैसा ही सब कुछ है, इस पर विश्वास न करने से भविष्य बर्बाद हो जाएगा! तब आप क्या करेंगे?

➢ यदि आपके पास पैसा नहीं होगा तो आप कैसे जीवित रहेंगे?

देखिए, हम कहाँ से शुरू हुए थे, अब हम कहाँ पहुँच गए हैं- पहले हमने जो विशाल विसंगतियाँ बुनी

थीं, अब हम अपनी ही बनाई हुई इस दुनिया के धागों में उलझे हुए हैं! ऊपर बताए गए सवालों के जवाब सरल लेकिन गहरे हैं, और उनके तर्क भी वही हैं जो तब दिए जाते जब पैसा ही जीवन जीने का एकमात्र ज़रिया बन जाता? किसने मानव जीवन में अपरिहार्य योगदान दिया और आप इतने आश्वस्त कैसे हैं कि आप जीवित रहेंगे- वास्तव में जीवित? पैसा = आपके लिए जीवन? क्या संभावना है कि पैसा होने के बाद भी आप खुशी से जीवन जी पाएंगे, क्योंकि आप चूहे की दौड़ में उलझे रहेंगे!

पैसा प्रसिद्धि, लोकप्रियता, खुशी ला सकता है और इन सभी को वर्तमान अवधि में समानार्थक शब्द के रूप में उपयोग किया जाता है। यह निश्चित रूप से एक खतरनाक स्थिति है और गतिशील रूप से एक क्रूर पक्ष में बढ़ रही है। भारतीय वैदिक प्रणाली स्पष्ट करती है कि स्पष्ट रूप से 4 परमपुरुष हैं-अर्थ जो धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष हैं। अंतिम लक्ष्य या स्थायी लक्ष्य केवल मोक्ष है, संहिता ऐसा कहती है और अधिकार का परीक्षण नहीं किया जा सकता है क्योंकि न्याय दर्शन वेदों को वैदिक शब्द मानकर उन्हें ज्ञान का सच्चा स्रोत मानता है न कि लौकिक जो लोगों की गवाही है जिस पर तुरंत भरोसा नहीं किया जा सकता है। सनातन धर्म ऐसे उदाहरणों से भरा पड़ा है जो बहुत कुछ बोलते हैं। मैं यहाँ अपना रुख साबित करने के लिए कुछ उदाहरण देना चाहता हूँ: -

दानवीर कर्ण- कुंती के प्रथम पुत्र, महाभारत के युद्ध से पहले, वासुदेव उसके पास गए और उससे कहा कि युद्ध में पांडवों की जीत के बाद, वे उसे हस्तिनापुर का राजा बना देंगे और वह वहाँ का शासक होगा, बशर्ते कि वह इस युद्ध में कौरवों की ओर से नहीं बल्कि पांडवों की ओर से लड़े। उत्तर में उसने मना कर दिया, क्योंकि वह दुर्योधन के साथ मित्रता के गुप्त बंधन में बंधा हुआ था, और वह उसे तोड़ नहीं सकता था। नचिकेता और यम संवाद के लिए प्रसिद्ध कठोपनिषद से पता चलता है कि कुमार नचिकेता ने यम से सर्वोच्च ज्ञान की खोज करने के लिए कहा, लेकिन मूल सिद्धांतों को बताने से पहले, धर्मराज यम ने उसकी परीक्षा ली। उन्होंने यह कहकर उसे बहकाने की कोशिश की कि वह बहुत सारा धन, शानदार सोना और विभिन्न प्रकार के आभूषण मांग सकता है , लेकिन उसे ज्ञान और आत्मज्ञान नहीं मांगना चाहिए। ब्रह्म जिज्ञासु नचिकेता ने उत्तर दिया कि जब धर्मराज यम मानव के सामने हों, तो क्या वे अजर-अमर हीरे-जवाहरात काम आएंगे? क्या वे यम के आगमन को रोकने में सक्षम हैं? इसलिए वह केवल अपरा विद्या का हिस्सा चाहता है। उपर्युक्त उदाहरणों से कुछ विचारोत्तेजक और प्रासंगिक बिंदु उठते हैं जो सार्थक हैं:

<u>**आलोचनात्मक विश्लेषण**</u> : धन “केवल यहीं और आगे नहीं” की अवधारणा है, जिसका अर्थ है कि इसका उपयोग पृथ्वी पर किया जा सकता है, यह कुछ हद तक मदद कर सकता है लेकिन यह शरीर के गिरने और व्यक्ति के मरने के बाद आत्मा को बनाए नहीं रख सकता। क्या संपत्ति का आकर्षण, कर्ण को पांडव की तरफ आकर्षित करने में सफल रहा? क्या धन से आप दोस्ती और प्यार खरीद सकते हैं? क्या धन आपको जीने के लिए अतिरिक्त समय दे सकता है, एक सांसारिक प्राणी पूछ सकता है कि आप अस्पताल जा सकते हैं और बकाया राशि का भुगतान कर सकते हैं और अपनी बीमारियों का इलाज कर सकते हैं, जिससे आपको अतिरिक्त समय मिल सकता है लेकिन क्या वह अज्ञानी उत्तर

आपको बता सकता है कि वह धन पूरी तरह से दृष्टिकोण की पुष्टि कैसे करेगा कि धन पूरी तरह से उसी बात का आश्वासन कैसे देगा?

यह अवधारणा केवल अप्रमाणिक विचारों से भरी हुई है। कोविड-19 की अभूतपूर्व स्थिति में, पूरा विश्व समय की कठोर मार झेल रहा था। ऐसे लोग थे जो अस्पताल और सुरक्षा किट, सैनिटाइजर, भोजन आदि जैसे आवश्यक तत्वों के बड़े हिस्से जमा कर रहे थे। वे इन वस्तुओं को थोक में संग्रहीत कर रहे थे और बढ़े हुए दामों पर बेच रहे थे। यह क्या दर्शाता है? नैतिकता और आचरण मजबूत लोकाचार हैं और किसी को कभी भी किसी चीज से मोह भंग नहीं होना चाहिए और इन मूल मूल्यों को नहीं छोड़ना चाहिए। यहां एक सरल प्रश्न उठता है: क्या गलत तरीकों से धन जमा करना और प्राप्त करना नैतिकता का प्रतीक था? नहीं! लेकिन पैसा ही सब कुछ है। एक सच्चा निष्काम कर्म अनुयायी इस कथन को समझ सकता है कि पैसे से क्या नहीं खरीदा जा सकता है" निष्कर्ष के तौर पर, यह प्रेय-मार्ग के अलावा और कुछ नहीं है, क्योंकि यह भोग के लिए तृष्णा की ओर ले जाता है; समस्या तब उत्पन्न होती है जब क्षणिक संतुष्टि को पुरुषों के लिए स्थायी सुख माना जाता है; चार्वाक दर्शन के बुरे शब्द यहाँ प्रसारित किए गए हैं। यह सिद्धांत दैत्यों और दानवों को लुभाने के लिए बनाया गया था, अगर मनुष्य का विचार ऐसा है तो मनुष्य और दैत्य में क्या अंतर है?

निष्कर्ष : इस तथ्य पर गहराई से विचार करें कि क्या हमारे स्वतंत्रता सेनानियों ने केवल इस राष्ट्र को स्वतंत्र कराने में हमारी मदद की, ताकि हम फिर से पैसे और आकर्षक सांसारिक इच्छाओं के हाथों अपनी स्वतंत्रता खो दें? इस महत्वपूर्ण मोड़ पर विचार-मंथन आवश्यक है, क्योंकि पैसा आपको मोक्ष या निर्वाण नहीं दे सकता है, यहाँ तक कि सबसे बड़ा बैंक बैलेंस भी आत्मा की प्यास नहीं बुझा सकता है। इसलिए, विषयान् विषयाय वात्यझा (जैसे आप जहर छोड़ते हैं, वैसे ही इसे भी छोड़ दें) क्योंकि केवल एक मूर्ख ही पैसे द्वारा बनाई गई माया पर विश्वास कर सकता है। डेसकार्टेस के दर्शन से संदर्भ लेते हुए, हमें उस "दानव" पर विजय पाने की आवश्यकता है जो हमें यह विश्वास दिला रहा है कि पैसा जीवन का अंतिम लक्ष्य है क्योंकि धर्म और मोक्ष अर्थ और काम की तुलना में उच्च स्थान पर हैं। "हम बाजार अर्थव्यवस्था से बाजार समाज की ओर बढ़ रहे हैं। अंतर यह है कि बाजार अर्थव्यवस्था एक साधन है - उत्पादक गतिविधि को व्यवस्थित करने के लिए एक मूल्यवान और प्रभावी साधन। बाजार समाज एक जीवन शैली है जिसमें बाजार मूल्य मानव प्रयास के हर पहलू में समाहित हो जाते हैं" - क्या हमें वास्तव में इस तरह के एक अपरिष्कृत परोपकारी समाज की आवश्यकता है, जहां कोई व्यक्ति नैतिक मूल्यों और नैतिक प्रथाओं को छत से केवल इसलिए फेंक सकता है क्योंकि "उसके पास अधिक पैसा है - इसलिए वह शासन कर सकता है?"

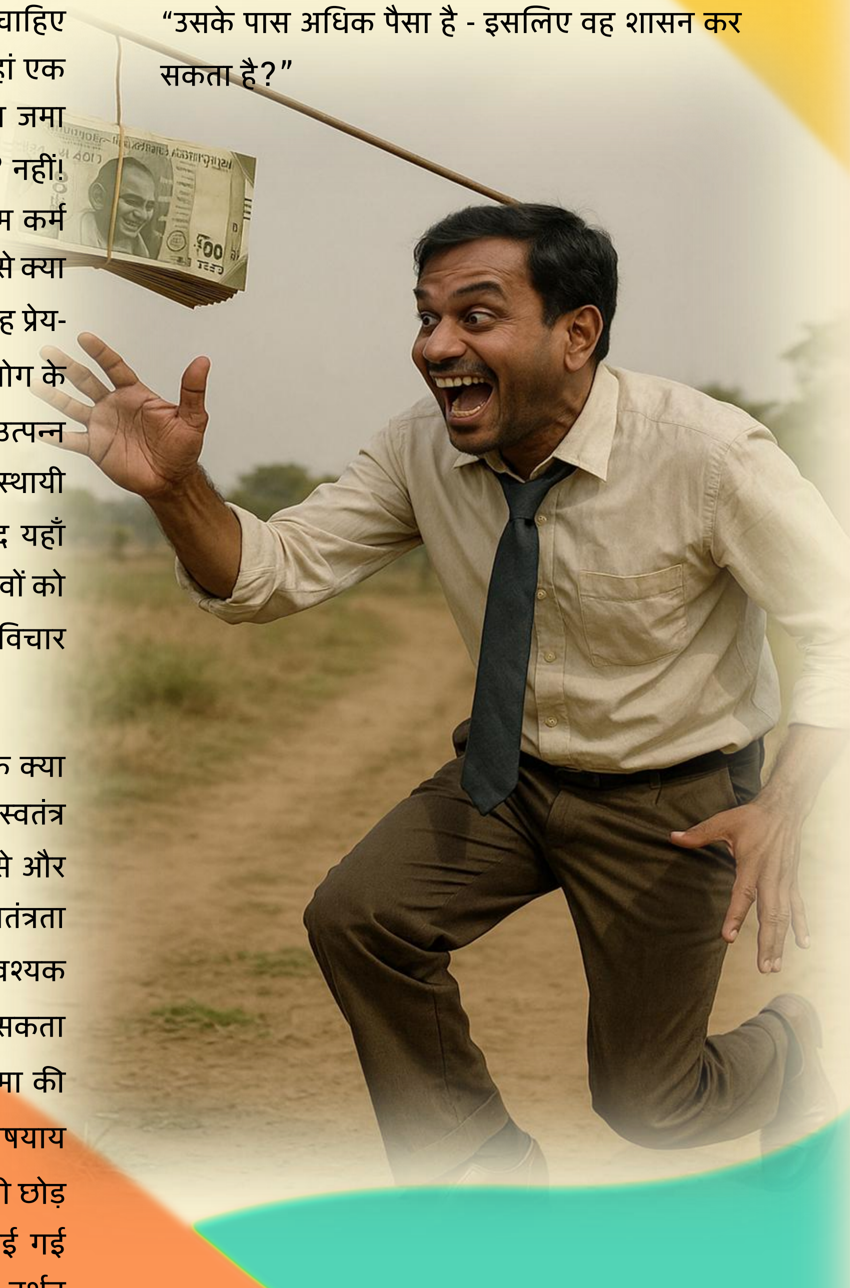

एक सामाजिक बंधन

कहानी

श्री संजय त्रिपाठी
सहायक पर्यवेक्षक

इस दिन को करीब दो साल हो गए थे जब पर्ल ने विक्की के विवाह प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया था। उनकी जोड़ी बड़ी अनूठी थी, बेहद खूबसूरत और हर दिन एक-दूजे की मुस्कान बढ़ाने से लेकर जीवन को जीवंत बनाने तक। उनका मिलना महज संयोग नहीं था। वास्तव में, यह कॉलेज के दौरान पर्ल की बुद्धिमत्ता और नई चीजें सीखने की इच्छा थी जो वास्तव में उन्हें करीब ले आई थी। विक्की गिटार बजाने में अच्छा था, लेकिन परीक्षा में पास होने के लिए संघर्ष करता था, जबकि पर्ल अपनी कक्षा में बहुत अच्छी थी, आकर्षण, पेपर से लेकर पास होने के लिए आवश्यक सभी विषयों में उच्चतम अंक प्राप्त करने तक। इसलिए, यह आकर्षण के बजाय सीखने की इच्छा थी जो उन दोनों को करीब लाती थी। पर्ल हमेशा गिटार बजाना और गाना चाहती थी, लेकिन विक्की से मिली शिक्षाओं ने उसे प्यार के तारों के साथ बजाना सिखाया, और उसने कभी गिटार बजाना नहीं सीखा। लेकिन विक्की ने निश्चित रूप से पर्ल का दिल जीतने के साथ-साथ अपनी सभी कॉलेज परीक्षाएँ पास कर लीं।

> विक्की ने अपनी मम्मी को दूसरे कमरे में ले जाने की कोशिश की, लेकिन आग में जलती हुई सास भयंकर चिल्लाती रही - "उसे सॉरी बोलने को कहो, नहीं तो वो अभी ये घर छोड़ कर चली जाए।" यह सुनकर विक्की ने उसे वहीं रोक दिया और कहा - "फिर तो मुझे बाकी की जिंदगी अकेले ही गुजारनी पड़ेगी।

कॉलेज के बाद जब दोनों की ज़िंदगी ऑफिस के घंटों में उलझी हुई थी, तो शादी उनके लिए अपने बचे हुए घंटों को बिताने का एक उपाय बन गई। शादी के बाद कुछ महीनों तक तो उनकी ज़िंदगी बहुत अच्छी चली, लेकिन समय के साथ जैसा होता है, विवाहित जीवन कॉलेज की कक्षा नहीं, परीक्षा लेता ही है, और लगभग दो साल बाद दोनों दुखी और परेशान होते जा रहे थे, लेकिन इसके लिए शादी जिम्मेदार नहीं थी, लेकिन दोषी तो शादी में मुफ्त में मिले उनके ससुराल वाले थे।

विक्की की माँ हमेशा से ही अपनी दुल्हन के बारे में बहुत गर्व महसूस करती थी, लेकिन उनके घर की दीवारें उस असंतोष को बयां कर रही थीं: जो थी एक माँ की अपने बेटे की पसंद से। उसे लगता था कि उसका बेटा तो साधु है, और पर्ल किसी जादूगरनी से कम नहीं है, जिसका उनके जीवन में प्रवेश करने का एकमात्र उद्देश्य उसके बेटे को अपने मायाजाल में फंसाना था ताकि माँ-बेटे के रिश्ते को तोड़ा जा सके।

काफी समय तक तो पर्ल विक्की की माँ का सम्मान करती रही। लेकिन विक्की की माँ ने कभी भी उससे माँ की तरह बर्ताव नहीं किया जिसके लिए पर्ल ने कभी भी इस बात की शिकायत नहीं की। हर बार जब वह एक माँ की तरह उसकी देखभाल करती थी, तो सास पर्ल को और भी कारण देती थी कि वह हमेशा अपनी सास के बारे में सास की तरह ही सोचे, एक महिला के रूप में नहीं। और फिर, एक दिन, पर्ल यह सब बर्दाश्त नहीं कर सकी जब सास ने अपनी सारी सीमाएँ तोड़ दीं और यह साबित कर दिया जैसा कि कहा जाता है कि एक औरत की सबसे बड़ी दुश्मन एक औरत ही है।

दिन ढल रहा था, सूरज बगीचे की दीवार से नीचे की ओर खिसक रहा था। पर्ल ने अपने बालों को जूड़ा बनाते हुए अपने कमरे में गई तो देखा कि विक्की की माँ उसके कमरे में उसका इंतज़ार कर रही थी। पर्ल ने विनम्रता से पूछा कि क्या उन्हें कुछ चाहिए, लेकिन सास ने कोई जवाब नहीं देने के बजाय अपनी कर्कश आवाज़ में उसे अपने सामने बैठने के लिए कहा। उसकी सास ने अपनी बात सीधे-सीधे न कहकर मुहावरों की तरह बोली कि "एक परिवार का पेड़ तभी अच्छा लगता है जब उस पर फूल खिले हों", पर्ल को उसका मतलब

समझ में नहीं आया, इसलिए उसने उससे फूलों और पेड़ों की अचानक बात का अर्थ स्पष्ट करने के लिए कहा। "क्या तुम दो से तीन बनने का इरादा रखती हो या नहीं?" सास ने कहा।

"क्या आप मेरे माँ बनने के बारे में बात कर रहे हैं?" पर्ल ने पूछा।

"और क्या, मैं वाकई में बच्चों के ही बारे में बात कर रही हूँ, यदि तुम परिवार पर ध्यान देना चाहो तो।"

"ओह, हमने अभी भी इसके बारे में नहीं सोचा है... असल में, मैं पर्ल ने झिझकते स्वर में कहा, "सच कहूँ तो मैं वास्तव में अभी इसके लिए तैयार नहीं हूँ।"

"तो फिर इसके लिए तैयार हो जाओ? तुम बच्चे चाहती हो या नहीं?" सास ने झिड़कते हुए पूछा।

"ओह, हम चाहते तो हैं। लेकिन मुझे लगता है कि माता-पिता बनने के लिए हमें मानसिक रूप से तैयार होने के लिए कुछ और समय चाहिए।"

"थोड़ा और समय"..."थोड़ा और समय... जब से तुम इस घर में आई हो, मैं यही सुन रही हूँ। तुम इस घर के लिए और मेरे बेटे के लिए भी बिल्कुल भी लायक नहीं हो। तुमने कभी खुद को देखा भी है? राक्षसों की तरह खाती हो, मेरे लिए कच्चा खाना पकाती हो, तुम्हारे शरीर पर चर्बी जमा होकर मोटी होती जा रही हो। और तो और तुम गोरी-चिट्टी भी नहीं हो, कम से कम मेरे बेटे जितनी भी गोरी तो होती। भगवान जाने जो बच्चा तुम पैदा करोगी, वह तुम्हारे जैसा काला होगा या गोरा।" वह लगातार अपने मुंह से ज़हर उगलती जा रही थी, बिना यह सोचे कि उसका बेटा दरवाज़े पर खड़ा उसकी सारी बातें सुन रहा था।

विक्की ने उसे टोकते हुए कहा, "माँ यह सब क्या कह रही हो? यही एक व्यक्ति है घर में जो हर वक्त तुम्हारा ख्याल रखती है, है न...?"

उसने विक्की की बात बीच में ही रोककर फिर से कहना शुरू किया, "तुम नहीं जानते विक्की, वह अपनी माँ और अपने इस काले से मुंह की तरह बेकार है... वह अपने पिता की तरह उस मोटे मुंह से बकवास करती है।"

पर्ल उस दिन खुद को रोक नहीं पाई जब उसकी सास ने बातचीत में उसके माता-पिता का नाम घसीटा जो बहुत ही अप्रासंगिक और अपमानजनक था। उसने उसे वहीं रोक दिया- "आप मेरे माता-पिता का नाम कैसे ले सकती हो? आपकी इन छोटी-छोटी बातों के लिए वे कौन हैं? लेकिन एक आप ही हो जो कभी भी इस बात से संतुष्ट नहीं हो सकती कि आप क्या हो और दूसरे क्या नहीं हैं, तो यह तुम्हारी समस्या है, मेरी नहीं। साथ ही, मेरे खाने की आदतों का जो आप शैतानी हिस्सा समझती हो और मेरे साथ तुम्हें जो रंग संबंधी समस्याएँ हैं, वे आपके मन की शैतानी पैदाइश हैं। मैं जो चाहे कर लूं वह आपके लिए कभी भी पर्याप्त नहीं होता और ना ही कभी होगा। और मेरे बारे में तुम्हारे मन में जो धारणाएँ हैं, मैं उन्हें चाह कर भी नहीं बदल सकती। अगर आपको लगता है कि मैं एक राक्षसी या फिर एक जादूगर चुड़ैल हूं, तो यह निश्चित रूप से इस बारे में आपको जागरूक होने की बहुत जरूरत है कि एक इंसान को कैसा होना चाहिए..."

विक्की ने अपनी मम्मी को दूसरे कमरे में ले जाने की कोशिश की, लेकिन आग में जलती हुई सास भयंकर चिल्लाती रही - "उसे सॉरी बोलने को कहो, नहीं तो वो अभी ये घर छोड़ कर चली जाए।" यह सुनकर विक्की ने उसे वहीं रोक दिया और कहा - "फिर तो मुझे बाकी की जिंदगी अकेले ही गुजारनी पड़ेगी। क्या तुम यही चाहती हो माँ? क्या तुम यही चाहती हो कि हमारा भविष्य दुख और अकेलेपन से भरा हो?" लेकिन वह गुस्से में पीछे हट ही नहीं रही थी।

उस रात, सभी लोग बिना किसी से माफ़ी मांगे सो गए, हालाँकि सास को पूरा यकीन था कि पर्ल उनसे माफ़ी माँगेगी, लेकिन उस रात पर्ल को पूरा यकीन था कि उसने जो किया है, उसे पहले ही करना ज़रूरी था। विक्की ने भी पर्ल से कुछ कहने के लिए नहीं कहा क्योंकि उसे भी लगा कि उसकी माँ की तरफ़ से बातचीत बेकार, जली-कटी और तानों से भरी थी। लेकिन पर्ल के लिए, वे सब बातें बेकार नहीं लेकिन निश्चित रूप से बहुत ज़्यादा मानसिक आघात पहुंचाने वाली थीं।

अगले दिन, पर्ल सभी से और पहले जाग गई। वह अपने दाँत ब्रश करने के लिए बाथरूम में गई,

लेकिन जैसे ही उसने खुद को आईने में देखा, उसके गालों पर आंखों से आँसू लुढ़क गए, और वह पूरी तरह से फूट पड़ी। उसने अपना माथा छुआ, अपना चेहरा धोया, अपने चेहरे की रूपरेखा को देखा और महसूस किया कि वह कहीं खो गई है, लेकिन तुरंत, उसने नल बंद किया, तौलिये से अपना चेहरा पोंछा और एक लंबी-सी मुस्कान चेहरे पर खिंचती चली गई।

पर्ल ने पहली बार खुद से पूछा–"क्या मैं इस जीवन को इसी तरह स्वीकार करने के लिए बनी हूँ?"

उसने अपनी डायरी खोली और अपने दिल की सारी भावनाएँ लिख डाली–निराशा, क्रोध, और अपने आत्मसम्मान की पुकार। लेकिन इसी लिखते-लिखते उसे एहसास हुआ कि यह कहानी किसी और के हाथों में नहीं हो सकती।

पर्ल ने अपना बैग पैक किया। वह विक्की के पास गई, उसे प्यार से देखा और कहा–"मैं खुद को खोने नहीं दे सकती। यह घर मेरा है, लेकिन मेरा सम्मान भी मेरी ही जिम्मेदारी है। मैं कुछ समय के लिए अपनी ज़िंदगी को नए सिरे से जीने जा रही हूँ।"

विक्की ने उसकी आँखों में देखा–वह जानता था कि यह कोई नाटक नहीं था, बल्कि उसके आत्मसम्मान की असली परीक्षा थी। उसने कोई सवाल नहीं किया, न उसे रोकने की कोशिश की, बस देखता रहा मानो कह रहा हो, "तुम्हारा कोई भी निर्णय हो, मैं तुम्हारे साथ हूँ।"

उस दिन, पर्ल घर से निकली, लेकिन वह भाग नहीं रही थी। वह खुद को खोजने जा रही थी। और उसकी कहानी वहीं खत्म नहीं हुई–बल्कि वहीं से उसकी स्वतंत्रता की असली शुरुआत हुई।

लेकिन आज यह सिर्फ एक नए दिन का आरंभ नहीं था–बल्कि एक नए अध्याय की शुरुआत थी, उन सामाजिक बंधनों को फिर से लिखने की।

दान की महिमा

कहानी

श्री रितेश कुमार सविता
एम.टी.एस.

एक भिखारी सुबह-सुबह भीख माँगने निकला। चलते समय उसने अपनी झोली में जौ के मुट्ठी भर दाने डाल दिए, इस अंधविश्वास के साथ कि भिक्षाटन के लिए निकलते समय भिखारी अपनी झोली खाली नहीं रखते। थैली देखकर दूसरों को भी लगता है कि इसे पहले से ही किसी ने कुछ दे रखा है।

पूर्णिमा का दिन था। भिखारी सोच रहा था कि आज अगर ईश्वर की कृपा होगी तो मेरी यह झोली शाम से पहले ही भर जाएगी। अचानक सामने से राजपथ पर उसी देश के राजा की सवारी आती हुई दिखाई दी। भिखारी खुश हो गया। उसने सोचा कि राजा के दर्शन और उनसे मिलने वाले दान से आज तो उसकी सारी दरिद्रता दूर हो जाएगी और उसका जीवन संवर जायेगा। जैसे-जैसे राजा की सवारी निकट आती गई भिखारी की कल्पना और उत्तेजना भी बढ़ती गई। जैसे ही राजा का रथ भिखारी के निकट आया, राजा ने अपना रथ रुकवाया और उतर कर उसके निकट पहुँचे। भिखारी की तो मानो साँसे ही रुकने लगी, लेकिन राजा ने उसे कुछ देने के बदले उल्टे अपनी बहुमूल्य चादर उसके सामने फैला दी और उससे भीख की याचना करने लगा। भिखारी को समझ नहीं आ रहा था कि वह क्या करें। वह सोच ही रहा था कि राजा ने पुनः याचना की। भिखारी ने अपनी झोली में हाथ डाला मगर हमेशा दूसरों से लेने वाला मन देने को राजी नहीं हो रहा था। जैसे-तैसे करके उसने दो दाने जौ के निकाले और राजा की चादर में डाल दिए। उस दिन हालांकि भिखारी को अधिक भीख मिली लेकिन अपनी झोली में से दो दाने जौ के देने का मलाल उसे सारा दिन रहा। शाम को जब उसने अपनी झोली पलटी तो उसके आश्चर्य की सीमा ना रही। जो जौ वह अपने साथ झोली में ले गया था, उसके दो दाने सोने के हो गए थे। अब उसे समझ में आया कि यह दान की महिमा के कारण ही हुआ। वह पछताया कि काश! उस समय उसने राजा को और अधिक जौ दिए होते लेकिन दे नहीं सका, क्योंकि उसकी देने की आदत जो नहीं थी।

शिक्षा-

1. देने से कोई चीज कभी घटती नहीं।

2. लेने वाला से देने वाला बड़ा होता है।

3. अँधेरे में छाया, बुढ़ापे में काया और अंत समय में माया किसी का साथ नहीं देती।

मैं बहादुर नहीं

आत्म-मंथन

सुश्री आकांक्षा सिकरवार
अतिथि रचनाकार

मुझे इस दुनिया को जानने-समझने से अच्छा खुद को समझना ज़्यादा महत्वपूर्ण लगता है। और मैंने अपने आप को समझने में सबसे पहला अपना डर समझा है, इसे अपने शब्दों में व्यक्त करती हूँ। मैंने बहुत कुछ पग-पग पर महसूस किया है, जिससे मैं बहुत डरी हूँ, लेकिन उस डर को बाहर न दिखाकर हृदय में दबाया है। कई बार पैदल चलते-चलते दो-चार लोगों के झुंड अगर देख रहे हों तो मैं डर जाती हूँ और डरते हुए भी सामान्य तौर पर चलने का प्रयास करती हूँ और अपने कदम आगे बढ़ाती हूँ।

> यह डर अब मेरी आदत का हिस्सा बन चुका है। किसी अनजान गली में मुड़ते ही दिल की धड़कन का तेज़ हो जाना, या किसी की मदद की पेशकश पर भी शक करना, यह सब अब स्वाभाविक सा लगता है। हर मुस्कान के पीछे का मकसद टटोलना पड़ता है और हर शब्द को बोलने से पहले तौलना पड़ता है।

यह डर अब केवल बाहरी नहीं रहा; यह मेरी सोच और मेरी आत्मा का हिस्सा बन चुका है। इसने मुझे सिखाया है कि अपनी हँसी को कैसे काबू में रखना है, अपनी आवाज़ को कितना धीमा रखना है और अपने सपनों को कितनी सीमित ऊँचाई देनी है। यह एक अनकहा आत्म-नियंत्रण है, जहाँ मैं खुद ही अपनी पहरेदार बन गई हूँ। किसी भी नए काम को करने से पहले मेरा मन सवालों से भर जाता है—क्या यह सुरक्षित है? क्या इससे मेरे परिवार के सम्मान पर कोई आँच तो नहीं आएगी? यह सवाल मेरे हर फैसले पर हावी रहते हैं।

छोटी हूँ, डर जाती हूँ जब अचानक से कोई मेरे पास खड़ा हो जाता है, और यह डर किसी भी इंसान से हो सकता है। इस डर ने मेरी शारीरिक प्रतिक्रियाओं को भी बदल दिया है। किसी अनजान गली में मुड़ते ही दिल की धड़कन का तेज़ हो जाना, या किसी की मदद की पेशकश पर भी शक करना, यह सब अब स्वाभाविक सा लगता है। यह निरंतर चलने वाली दिमागी थकान मुझे अंदर से खोखला कर देती है। जिस समाज में हम रहते हैं, वहाँ ताका-झाँकी इतनी होती है कि कौन क्या कर रहा है। डर लगता है कि कहीं कोई काम मेरे सिर का कलंक न बन जाए और हमारे ऊपर कोई मानसिक परेशानी न आए।

अब ये आँखें सिर्फ सड़कों पर ही नहीं घूरतीं, बल्कि मोबाइल स्क्रीन के पीछे से भी देखती हैं। अपनी एक तस्वीर साझा करने से पहले सौ बार सोचना पड़ता है। एक गलत शब्द या एक नासमझी में किए गए कमेंट का डर हमेशा बना रहता है। यह एक ऐसा जाल है जहाँ आपकी हर गतिविधि पर नज़र रखी जा रही है और आपको आंका जा रहा है। यहाँ गलती की कोई माफ़ी नहीं, बस एक स्थायी दाग है।

जब मैं सखी-सहेलियों के साथ होती हूँ तो डर लगता है कि आस-पड़ोस के लोग न देख लें और वो मेरी मित्रता से मेरे चरित्र का निर्धारण न कर लें। मेरे चरित्र को जो वो अपनी भाषा में परिभाषित करेंगे तो वह परिभाषा मेरे माँ-पिता की परवरिश पर कई प्रश्न उठा देगी। कोई तेज आवाज में डांट दे तो वहीं खड़ी सहम जाती हूँ, हिम्मत नहीं होती कि मैं कुछ बोल जाऊँ। घर में कहा जाता है, "कम बोलो, धीरे चलो, तेज आवाज में मत हंसो," क्योंकि यह आकर्षण का कारण माना जाता है और वह डरते हैं क्योंकि उनके पास एक लड़की होती है।

यह डर अब मेरी आदत का हिस्सा बन चुका है। किसी अनजान गली में मुड़ते ही दिल की धड़कन का तेज़ हो जाना, या किसी की मदद की पेशकश पर

भी शक करना, यह सब अब स्वाभाविक सा लगता है। हर मुस्कान के पीछे का मकसद टटोलना पड़ता है और हर शब्द को बोलने से पहले तौलना पड़ता है। इस डर ने मुझसे मेरे कई सपने छीने हैं। कितनी ही बार मैंने किसी नए शहर में नौकरी का अवसर सिर्फ इसलिए छोड़ दिया क्योंकि वहाँ मैं अकेली कैसे रहूँगी? यह डर एक एहसास नहीं, बल्कि एक दीवार है जो मेरे और मेरी आज़ादी के बीच खड़ी है, जो सिखाती है कि सुरक्षा के लिए सपनों की कुरबानी देना ही समझदारी है।

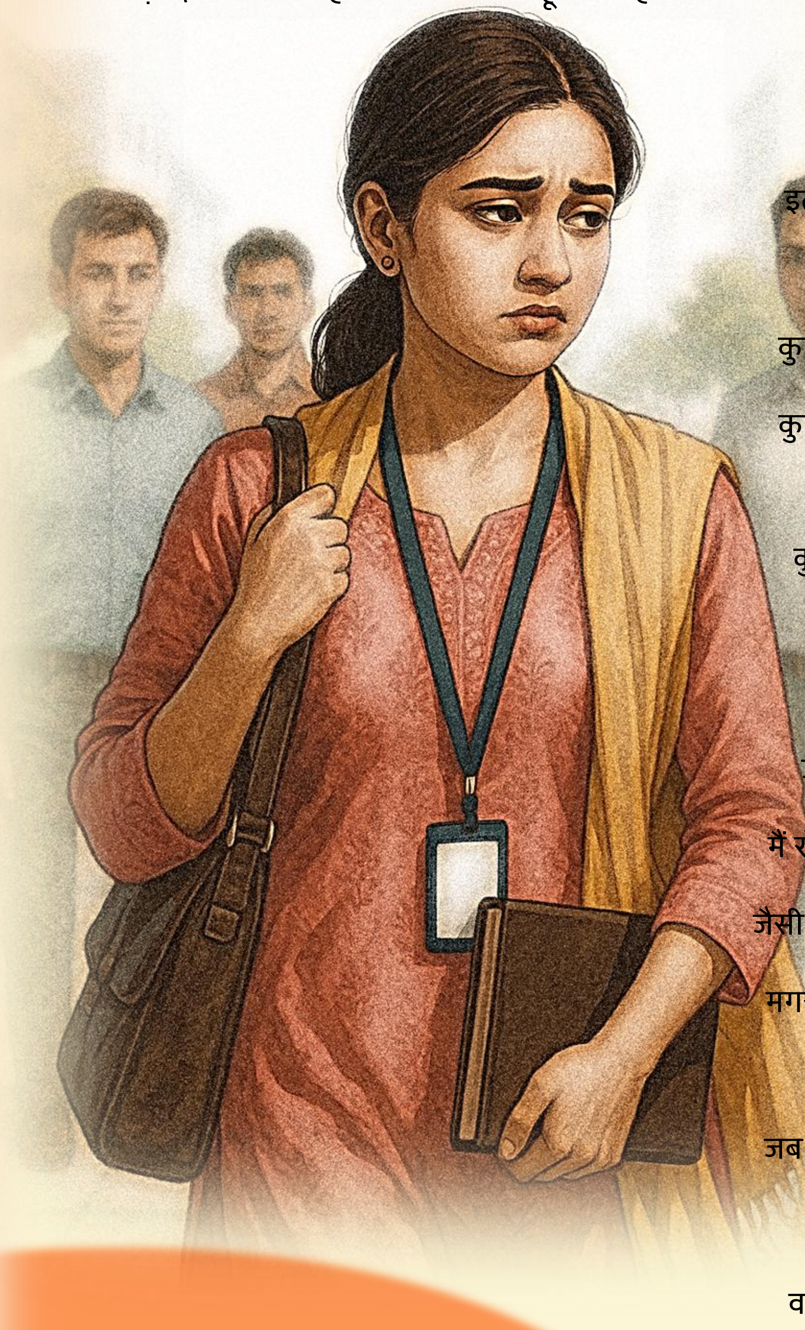

जब मैं कार्यालय से थक कर घर जाती हूँ तो घर जाने के बाद मेरी हालत कुछ ऐसी होती है:

शाम घर आकर जब मैंने, खुद को झाड़ा तो,

इतनी आँखें गिरीं ज़मीं पर, कुछ घूरतीं, कुछ रेंगतीं,

कुछ टटोलतीं मेरा तन-मन।

कुछ आस्तीन में फँसी थीं, कुछ कॉलर में अटकी थीं,

कुछ उलझी थीं बालों में, कुछ गर्दन के पीछे चिपकी मिलीं,

कुछ उंगलियों में, कुछ पैरों में, कुछ नशीली, कुछ रसीली,

कोई बेशर्मी से भरी हुई, ये आँखें ऐसी क्यों हैं?

उनकी-हमारी इन आँखों में इतना अंतर क्यों हैं?

मैं रोज़ प्रार्थना करती हूँ, कुछ न चिपका मिले मुझ पर,

जैसी मैं सुबह जाती हूँ, वैसी साफ़-सुथरी आऊँ वापस घर,

मगर ऐसा हो पाता नहीं, बोझ उठाए नज़रों का हरदम।

चलते रहना नियति है मेरी शायद।

जब कोई घूरकर देखता है तो उसको नहीं मैं देख पाती,

शायद मैं डरपोक हूँ, बहादुरी नहीं दिखा पाती।

वह हिम्मत नहीं जुटा पाती दुनिया से लड़ पाने की,

क्योंकि मुझे डर है इस दुनिया से हार जाने का।

अंबाला बस स्टैंड के कुछ घंटे

श्री नवीन कुमार कौशिक
सहायक लेखा अधिकारी

यात्रा-वृत्तांत

आज प्रातः ही हम लोग पंचकुला से वापस ग्वालियर आए। मैं, श्रीमती जी और हमारा 16 महीने का पुत्र अभिराम। श्रीमती ने हरियाणा लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित सहायक प्राध्यापक परीक्षा का पर्चा भरा था जिसकी मुख्य परीक्षा कल दिनांक 17 अगस्त को पंचकुला में थी। ग्वालियर से पंचकुला का कोई सीधा साधन नहीं होने से यहाँ से पहले रेल से अंबाला गए फिर वहाँ से बस से पंचकुला। पंचकुला अंबाला से लगभग 42 कि.मी. की दूरी पर है। श्रीमती की परीक्षा 10 बजे से 1 बजे तक थी। तब तक मैंने होटल में अभिराम को संभाला। होटल पंचकुला बस स्टैण्ड के सामने ही लिया हुआ था। श्रीमती के आते ही डेढ़ बजे तक हम बस स्टैण्ड पहुँच गए। अंबाला की एक बस चलने को तैयार थी पर परीक्षार्थियों के जत्थे उसी समय वहाँ पहुँच रहे थे जिस कारण उसमें काफी भीड़ थी। अंबाला तक सवा घंटा लगना था और वहाँ से हमारी रेल भी संध्या 5 बजे थी तो हमने अगली बस में जाना उचित समझा। 2 बजे चलने वाली एक ए.सी. बस खड़ी थी जिसमें हम जाकर बैठ गए। मैं जाकर एक पानी की बोतल ले आया। बस अपने निर्धारित समय पर चली। अभिराम मस्ती करता रहा और हम लगभग साढ़े तीन बजे अंबाला बस स्टैण्ड पहुँच गए।

> वो महिला मानसिक रूप से ठीक नहीं है। शायद 50-60 साल से ऊपर की रही होगी। मेरे मन में विचार आया कि ये भी कभी पैदा हुई होगी। शायद इनके माता पिता ने भी इनके लाड़ किए होंगे। जवान हुई होंगी; इनके भी मित्र-सहेलियाँ रहे होंगे; इनके भाई-बहन भी होंगे; विवाह हुआ होगा; शायद बच्चे भी हुए हों; और आज इनकी क्या स्थिति है।

अब यहाँ से वह वृत्तांत प्रारंभ हो रहा है जिस कारण मैं यह सब लिखने को प्रेरित हुआ। अंबाला से ग्वालियर के लिए हमने मालवा एक्सप्रेस में आरक्षण करवाया था। मालवा एक्सप्रेस का अंबाला पहुँचने का समय शाम को 5 बजे था। किसी कारण हमारी रेल उसके मूल उद्गम स्टेशन श्री माता वैष्णो देवी कटरा स्टेशन से 2 घंटे के विलंब से चली। अंबाला बस स्टैण्ड पहुँच कर रेल

जैसे सैम्पलिंग में किसी बड़ी जनसंख्या में से कुछ सदस्यों या वस्तुओं को चुनकर उनका अध्ययन करते हैं ताकि पूरे समूह के बारे में जानकारी प्राप्त की जा सके।

की ताज़ा स्थिति देखी तो ज्ञात हुआ कि रेल 3 घंटा 20 मिनट के विलंब से चल रही है। तो इस हिसाब से अंबाला 8 बजे के बाद ही पहुँचने वाली थी। 2 महीने पहले इसी परीक्षा के प्रथम चरण हेतु जब पंचकुला आए थे तो अंबाला स्टेशन रुके थे 2-3 घंटे। वहाँ ए.सी. प्रतीक्षालय भी जीर्ण-शीर्ण अवस्था में था और रेलवे स्टेशन पर तो भीड़ के मारे पाँव रखने की भी जगह नहीं थी। साथ में शिशु होने के कारण हमने बस स्टैण्ड पर ही अगले 5 घंटे इंतज़ार करने का निश्चय किया। दिन भर से बादल होने से मौसम भी ठीक ही था और रेल्वे स्टेशन के भीड़ भरे भीड़े प्लेटफॉर्म की तुलना में बस स्टैण्ड का यात्री क्षेत्र बड़ा था। भीड़ तो बस स्टैण्ड पर भी खूब थी पर रेलवे प्लेटफॉर्म की तुलना में खुला और बड़ा क्षेत्र था। फिर वहाँ बैठने के लिए कुर्सी ढूंढने के लिए श्रीमती और मैंने आँखें दौड़ाईं। वहाँ 3 कुर्सियों के जोड़ वाली सीट थी और लंबी, थोड़ी चौड़ी टेबल आकार की सीट थी। एक टेबल नुमा सीट पर खाली जगह दिखाई दी तो हम वहाँ चल दिए। बस स्टैण्ड पर कई पंखे लगे थे लेकिन जहाँ हम बैठे वहाँ ऊपर पंखा नहीं था। शायद वहाँ जगह भी इसीलिए थी कि ऊपर पंखा नहीं था। हमारे पास छोटे 3 बैग्स थे जो सीट पर रखकर हम बैठ गए। अभी साढ़े तीन ही हुए थे और 8 बजे तक का समय निकालना था। अभिराम बस में कुछ देर सो चुका था तो अब उसका हाथ में रुकने या बैठने का मन नहीं था। साथ ही बस स्टैण्ड पर इतने आदमी; बच्चे और बड़े, कुत्ते और कबूतर, और बसें उसका ध्यान आकर्षित करने को पर्याप्त थी। वह सीट से उतरकर स्वयं ही बस स्टैण्ड के निरीक्षण को निकल चला। श्रीमती भी उसके पीछे-पीछे चल दी।

उसी प्रकार मुझे लगता है कि रेलवे स्टेशन या बस स्टैण्ड जैसे भीड़-भाड़ वाले क्षेत्र हमारे समाज का और एक प्रकार से जीवन का ही एक नमूना हैं जिसमें हम समाज और

जीवन के गुणों, विशेषताओं और सत्य को देख सकते हैं। बस स्टैण्ड पर सैकड़ों लोग थे। कुछ आ रहे थे कुछ जा रहे थे। अच्छे से अच्छे कपड़ों वाले थे तो कुछ फटे मैले कपड़ों वाले भी थे। कुछ देने वाले थे कुछ मांगने वाले और कुछ मेरी तरह मूक दर्शक। कोई अपनी बस के इंतज़ार में था, कोई किसी अपने के और कोई ऐसा जिसे किसी का इंतज़ार न था, उन्हें न कहीं जाना था न कहीं आना, वहीं रहना था। बसें आ रही थी और जा रही थी। सवारियाँ उतर रही थी और चढ़ रही थी। कुछ खा-पी रहे थे कुछ मूत्रालय में भीड़ लगाए हुए थे।

श्रीमती, अभिराम को वापस सीट पर खींच लाई और बैग में से एक केक का पैकेट खोल लिया उसे बिजी रखने के लिए। इसी बीच मैले कपड़े पहने एक 4-5 साल का बच्चा पैसे मांगने आ गया। मैंने उसे भगा दिया। लौटाया नहीं शायद भगा ही दिया। थोड़ी दूर एक अन्य कुर्सी पर मैले कपड़े पहने एक उतनी ही उम्र की लड़की किसी और से पैसे मांग रही थी। उसकी बिना बाँह की, लंबे कंधे वाली ड्रेस थी जिसके कंधे उसकी नाभि तक आ रहे थे। उसके नीचे एक छोटी सी निक्कर थी। पाँव में कुछ पहना नहीं था। ड्रेस मूलतः तो गुलाबी रही होगी पर अब मैल से सलेटी हो चुकी थी। उसे पता नहीं उन कुर्सी वालों ने कुछ दिया या नहीं, क्योंकि मेरा ध्यान फिर अभिराम पर आ गया था। थोड़ी देर बाद अभिराम फिर उतरकर चल दिया सैर को। इस बार मैं उसके पीछे गया। सामने एक खाली टिकट का काउंटर था। 5 फुट ऊंचाई का अर्ध चक्र के आकार का था। थोड़ा आगे एक पैड़ी नीचे बसों का क्षेत्र था। उस काउंटर के पीछे मैंने देखा वे दोनों मांगने वाले लड़का लड़की नीचे बैठे थे और सिक्के गिन रहे थे। फिर उस लड़के ने वो सिक्के बटोर लिए और वे एक दूसरे के कपड़े खींच कर आपस में बात करने लगे। मेरे मन में विचार आया इन बच्चों को कैसा बचपन भाग्य में मिला है। वैसे तो थोड़ी समानुभूति मुझमें शायद पहले से है पर अब 2 बच्चे हो जाने के बाद मेरे स्वभाव में थोड़ी कोमलता और आई है। बच्चे चाहे किसी पशु के हों या मनुष्य के कितने कोमल और असहाय होते हैं। उनके लिए हर एक दृश्य, हर अनुभव नया सा होता है। माता पिता और विशेषकर माता की कितनी आवश्यकता रहती है बचपन में। ये हमारा भविष्य भी हैं। मुझे लगता है इन्हें तो जितना लाड़-प्यार मिले वो कम है। पर प्रकृति और समय के अपने नियम हैं। जीव ये चुनाव नहीं कर सकता कि वह कहाँ किस परिस्थिति में जन्म लेगा और उस परिस्थिति में कम से कम बचपन में तो क्षमता नहीं होती कि वो लड़ सके। इन दो बच्चों के अतिरिक्त भी 8-10 वर्ष की आयु के कई बच्चे वहाँ बस स्टैण्ड पर घूम रहे थे, यात्रियों से मांग रहे थे। जो दे देता तो भी चले जाते; कुछ मेरे जैसे नहीं देते तो भी अगले की ओर बढ़ जाते। मैंने कई बस स्टैण्ड और रेलवे स्टेशन पर देखा है कि बच्चों और बड़े विशेषकर महिलाओं के समूह रहते हैं। वे अलग-अलग मांगते रहते हैं। फिर बाद में एकत्रित हो अपने हिसाब से समायोजन करते हैं।

कुछ और यात्रियों के पास भी बच्चे थे। कोई हमारी तरह ऊपर सीट पर बैठे थे। कुछ ने नीचे बस स्टैण्ड के फर्श पर ही बैठ गए और बच्चे भी वहीं छोड़ दिए। एक छोटा बच्चा नीचे पड़ी चीजों को उठा कर खा रहा था। उसके माता पिता ने देखा या नहीं पता नहीं पर वे वहीं बैठे थे। उसकी एक बड़ी बहन थी 3-4 साल की। वो उस काउंटर के आस पास खेल रही थी। अभिराम भी भाग कर वहीं खेलने लगा। कभी मैं उसके पीछे जाता तो कभी श्रीमती।

वहाँ थोड़ी दूर एक बुजुर्ग महिला लेटी हुए थी। उसके फटे-पुराने कपड़े थे और एक वैसे ही थैले का सिरहाना बना कर वो लेटी थी। अभिराम को घुमाते हुए मेरी एक नजर गई थी उनपर फिर मैं वापस आकार सीट पर बैठ गया। वो परिवार जो नीचे बैठा था वो उठकर चला गया। उनकी बेटी चिप्स खा रही थी। उसके पैकेट से कुछ चिप्स नीचे गिर गए थे। जाते हुए उस बच्ची ने वो पैकेट भी वहीं फेंक दिया। थोड़ी देर बाद देखा तो वो बुजुर्ग महिला जो दूर लेटी हुई थी वो उन चिप्स को हाथ से बटोर रही थी। फिर उसी पैकेट में उसने वो बटोरे हुए चिप्स भर लिए। उसके बाद उसके हाथ में शायद एक बोतल थी जिससे वो उन चिप्स के पैकेट को कूटने लगी। फिर उसने पैकेट उठाकर अपने मुंह में उड़ेल लिया। उसके बाद वह इधर उधर घूमकर नीचे पड़ी चीजों को उठाकर खाने लगी। कोई बोतल मिलती तो उसमें से जो एकाध बूंद निकलती उसे पी लेती। फिर वो एक कूड़ेदान से कुछ ढूंढने लगी। इस बीच श्रीमती अभिराम के पीछे गई हुई थी। मेरे हाथ में एक बिस्कुट का पैकेट था जिसे मैं खा रहा था। वो बुजुर्ग महिला फिर मेरे सामने से निकली और मैंने उसे रोक कर पूछा कि अम्मा क्या कर रहे हो और उसकी तरफ

बिस्कुट का पैकेट बढ़ा दिया। उसने हाथ हिला कर मना कर दिया और फिर आगे जाकर नीचे से कुछ उठाकर खाने लगी। श्रीमती दूर से ये सब देख रही थी। उन्होंने मुझे इशारा किया कि तुम्हारे साथ तो ऐसा ही होना चाहिए। मेरी थोड़ी इच्छा रहती है कि लोगों की मदद का प्रयास किया जाए। श्रीमती का भी सौम्य स्वभाव है। पर उनके सहायता करने के तरीके और परिभाषा अलग हैं। जब श्रीमती पास आई तो कहा कि वो महिला मानसिक रूप से ठीक नहीं है। शायद 50-60 साल से ऊपर की रही होगी। मेरे मन में विचार आया कि ये भी कभी पैदा हुई होगी। शायद इनके माता पिता ने भी इनके लाड़ किए होंगे। जवान हुई होंगी; इनके भी मित्र-सहेलियाँ रहे होंगे; इनके भाई-बहन भी होंगे; विवाह हुआ होगा; शायद बच्चे भी हुए हों; और आज इनकी क्या स्थिति है। हो सकता है ये सब कुछ ना हुआ हो इनके जीवन में। शायद बस स्टैण्ड पर घूमने वाले बच्चों की तरह इनका जीवन बीता हो और आज भी यूं ही कचरा खाने को विवश हैं। जीवन सबके लिए एक समान नहीं है। और हमारे पूर्वज पहले ही इन सब तथ्यों को देखकर; इनसे जूझकर कर्म के सिद्धांत और अन्य दर्शन हमें दे चुके हैं। हमारे सब प्रश्नों के उत्तर हमारे पास हैं पर फिर भी नहीं हैं।

थोड़ी देर बाद पहले 2 बच्चों से अलग एक और लड़का मेरे पास कुछ मांगने आया। उस समय श्रीमती पास ही बैठी थी। मेरे पास फिर एक बिस्कुट का पैकेट था और उनमें से 4-5 बिस्कुट मैंने उस लड़के को दे दिए। फिर मैंने नहीं देखा पर श्रीमती ने बताया कि वो लड़का बिस्कुट लेकर गया तो एक उससे बड़े लड़के ने वो बिस्कुट उससे ले लिए। यह भी जीवन का नियम है ही। हर स्तर पर; हर प्राणी में समूहों में सत्ता या शक्ति की श्रेणीबद्ध व्यवस्था बन जाती है। और अधिकतर प्राणियों को उसी अनुसार चलना पड़ता है।

फिर थोड़ी देर में लँगड़ाता हुआ एक युवक आया। उसके पैरों में जगह-जगह सफेद दवा सी लगी हुई थी। वो भी कुछ मांग रहा था पर मैंने उसे जाने को कहा। जब वो पास था तो मैंने इतना ही ध्यान दिया कि उसने एक टी-शर्ट पहनी थी। फिर जब वो थोड़ा दूर चला गया तो देखा कि सिर्फ टी-शर्ट ही पहनी हुई थी। लँगड़ाते हुए चल रहा था और अपने बाएं हाथ से उसने अपने टांगो के नीचे से उस टी-शर्ट को पकड़ा हुआ था। संभवतः उसे लज्जा की भावना तो थी। फिर वही सब बुजुर्ग महिला वाले विचार मेरे मन में आने लगे। अगली बार जब वो दिखा तो उसने नीचे एक छोटा तौलिया लपेटा हुआ था। संभवतः किसी भले आदमी ने मदद की होगी।

अभिराम फिर भाग गया और मैं फिर उसके पीछे गया। आगे मैंने देखा कि एक स्तम्भ के पास एक लड़की बैठी थी। 10-12 साल की रही होगी। दुबली-पतली थी; उसके बाल छोटे थे; लड़कों जैसे और उसने एक फ्रॉक सा पहना हुआ था जो उसके घुटने तक था। उसने कान में लंबे सीप के झुमके पहने हुए थे। उसके पास एक प्लास्टिक का खाली सफेद डिब्बा और एक थैला रखा था। उसकी गोद में एक आदमी लेटा हुआ था। कृशकाय था; चेहरे पर दाढ़ी थी, बिखरे बाल थे; संभवतः उसका पिता था। उसका मुंह दूसरी तरफ था। ऊपर एक शर्ट और नीचे आड़ी-तिरछी लुंगी बंधी थी जो पीछे से गीली थी। वो लड़की उसके सर पर हाथ फेर रही थी। आजकल पुरुषों और महिलाओं के बराबरी के वाद-विवाद चलते रहते हैं पर ममता तो माँ के पास ही होती है। और यहाँ एक बेटी के पास थी। ना जाने कहाँ से आए थे और कहाँ जाना था उनको। क्या पता उनको कुछ जरूरत हो; मैंने नहीं पूछा। असमानता और असहायता का बोध लिए मैं अभिराम को वापस लौटा लाया। जहाँ हम लोग बैठे थे वहाँ से वे लोग स्तम्भ की ओट में होने के कारण दिख नहीं रहे थे।

हमारी सीट से थोड़ी आगे एक लम्बवत सीट थी जिसपर भी कुछ लोग बैठे थे। उसपर एक युवती बैठी थी, शायद अविवाहित। वह अभिराम को निरंतर इशारे से बुलाने का प्रयत्न कर रही थी पर अभिराम उसकी ओर देखकर भी कोई प्रतिक्रिया नहीं कर रहा था। मेरा ध्यान तो अभिराम पर था पर आँख के कोने से दिख रहा था कि वो निरंतर इशारा कर रही है। 2-3 मिनट तक लगातार ये चला। फिर मैंने अभिराम को उठाकर उस लड़की के पास बैठा दिया। उसने अभिराम को पकड़ा लेकिन वो रोने लगा और उतरकर हमारे पास आ गया।

फिर कुछ समय बीत गया। वहाँ अभिराम को कबूतर और कुत्ते दिखते रहे और वो इशारा करके हमें बताता रहा। एकाध बार मैं और श्रीमती उसे इनके नजदीक भी ले गए दिखाने के लिए। फिर एक दुकान की तरफ से वो लंबे कंधे की ड्रेस वाली छोटी लड़की दिखाई दी। वो खाँसती हुई चल रही थी। घर में तो हम बच्चों को थोड़ी तकलीफ होते ही दवा-दारू में लग जाते हैं। इनकी भी होती होगी शायद। वैसे तो वहाँ भाँति-भाँति के लोग दिख रहे थे। पर कुछ लोगों पर स्वतः ध्यान आकर्षित हो

रहा था। एक संभावित जनजातीय परिवार आया। आदमी ने धोती, कुर्ता और पगड़ी पहनी थी और औरत ने घाघरा-चोली। उसका सिर ढका हुआ था। उनके साथ 2 छोटे बच्चे थे जो दोनों ही 3 साल से छोटे थे। फिर मेरा अलग जगह ध्यान चल गया। थोड़ी देर बाद पीछे दुकान से जोर से आवाज आई “40 रुपये और दे”। मैंने पीछे मुड़कर देखा तो वो घाघरा-चोली वाली महिला वहाँ अपने दोनों बच्चों के साथ खड़ी थी। एक के हाथ में सैंडविच था और दूसरे के हाथ में बर्गर जैसा कुछ था। शायद दूसरे ने अपने लिए अलग लेने की जिद की होगी और महिला ने कम रुपये दे दिए होंगे। संभवतः भाषा की समस्या भी रही होगी तो उस आदमी को तेज आवाज में बोलने की जरूरत लगी। फिर वो महिला बाकी रुपये देकर एक बच्चे को गोदी में लिए चली गई। दूसरा बच्चा अपने सामान को खाते हुए नंगे पैर उसके पीछे-पीछे हो लिया। कहीं आने जाने में अच्छे खाने की हमेशा समस्या बनी रहती है। बड़ा आदमी तो बिना खाए काम चला ले कुछ देर पर बच्चों के लिए आवश्यकता होने पर कुछ भी लेना पड़ता है।

थोड़ी देर बाद मेरी नजर उस स्तम्भ की तरफ गई जहाँ वो लड़की अपने पिता के साथ बैठी थी। वे लोग तो दिख नहीं रहे थे पर एक युवती उनसे कुछ बात कर रही थी। शायद कॉलेज के बच्चे होंगे। उसके साथ थोड़ी दूर 4-5 युवक-युवतियाँ और खड़े थे। सिर्फ वो युवती आगे होकर उस लड़की और उसके पिता से बात कर रही थी। शायद जो मैं उनसे नहीं पूछ सका वो वही पूछ रही थी। उसने थोड़ी देर उनसे बात की। कुछ उसके साथ वाले भी कह रहे थे। दूर से कुछ सुनाई तो नहीं दे रहा था। फिर कुछ देर बाद मैंने देखा कि वो युवती अपने साथियों के साथ जाकर खड़ी हो गई। स्तम्भ के पास बैठी लड़की का स्थान थोड़ा बदल गया था। तो वो मुझे दिख रही थी। केला खा रही थी। संभवतः उस युवती ने दिया होगा। फिर उसका पिता भी बैठा दिखाई दिया। वो दूसरी तरफ बैठे किसी आदमी से बात कर रहा था। मुझे लगा कहीं जाने के लिए बस के बारे में बात कर रहा था क्योंकि जिस आदमी से वह बात कर रहा था उसने कुछ इशारा किया तो वह उठ खड़ा हुआ। फिर लड़खड़ाते हुए पास की एक कुर्सी पर जा बैठा। उसके पिता के उठते ही वो लड़की भी उठ खड़ी हुई। पहले उसने पिता के नीचे बिछे हुए चादर को उठाया और झाड़ कर उसकी तह की। फिर उसने नीचे पड़ी उसके पिताजी की लाठी और पास में रखा सफेद डिब्बा और थैला उठाया और उसके पिता के पास गई। उसका पिता सीट से उठ खड़ा हुआ फिर उस लड़की के सहारे से धीरे-धीरे चलते हुए वे लोग आगे बढ़ गए।

अभिराम को घुमाते हुए मैं बस स्टैण्ड के एक ओर ले गया। वह मोटर साइकिल की पार्किंग थी। थोड़ी ही जगह खाली थी। आजीविका के लिए बहुत 'सफर' करना पड़ता है। पार्किंग और बस स्टैण्ड की दीवार के बीच एक गलियारा था जो बाहर की तरफ जा रहा था पर उसे तार से बंद किया हुआ था। आगे बढ़ा तो दीवार के साथ एक कबूतर मरा पड़ा था। चींटियाँ उस पर दावत उड़ा रही थी। जीव जीवस्य जीवनं। अभिराम ने उस कबूतर को देख कर इशारा किया। उसे तो अभी मृत्यु की अवधारणा का पता नहीं है। पर क्या हमें भी है? फिर हम थोड़ा घूम कर वापस सीट पर लौट आए। फिर कुछ समय बाद मैं अभिराम को बस स्टैण्ड के मुख्य प्रवेश द्वार की तरफ ले गया। वहाँ प्रवेश द्वार पर व्हीलचेयर में बैठा एक आदमी सबसे पाँच रुपये मांग रहा था। थोड़ा आगे निकल कर मैं अभिराम को बाईं ओर ले गया। वो भी बस स्टैण्ड परिसर ही था। कुछ कारें खड़ी थी। एक तरफ बस स्टैण्ड की दीवार टूटी हुई थी। पास में कुछ ईंट और रेती पड़ी थी। रेती के एक छोटे ढेर के पास मैंने अभिराम को नीचे छोड़ दिया। वह दोनों हाथ पीछे लगाए मुआयना करता हुआ सा टहलने लगा। उसके एकाध फोटो और वीडियो मैंने बना लिए। फिर उसने गोदी लेने के लिए इशारा किया तो मैं उसे वापस लौटा लाया। वहाँ प्रवेश द्वार पर वो व्हीलचेयर वाला आदमी किसी से झगड़ रहा था। उसका कोई परिचित ही लग रहा था।

पास की लम्बवत सीट के दूर के कोने में एक महिला अपनी 3-4 साल की बेटी के साथ बैठी थी। उस समय उस मेज पर कोई और नहीं था। अभिराम के 2 घंटे से भागने से थक कर मैंने उसे मोबाइल दे दिया। वो उसे लेकर पास वाली सीट पर चला गया और मैं भी उसके साथ बैठ गया। उस सीट पर बैठी महिला की लड़की पास आकर खड़े होकर मोबाइल की तरफ देखने लगी। मैंने इशारे से उसे पास बैठने को कहा और वो आकर बैठ भी गई। इतने में मैं श्रीमती से बात करने लगा तो उन्होंने अभिराम की तरफ इशारा किया। मैंने देखा कि वो उस लड़की को दूर कर रहा था। जब मैं नहीं देख रहा था तब तक वो उस बच्ची के चेहरे पर भी हाथ चला चुका था। 16 महीने के बच्चे को मार का मतलब तो नहीं पता होगा पर आसपास के बच्चों से खेल-खेल में हाथ चलना तो सीख ही जाते हैं। इस उम्र में शायद 'मेरा' का भाव भी मन में

आने लग जाता है क्योंकि घर में भी वो अपनी बहन को मेरी गोदी में नहीं बैठने देता। उसे मेरे या श्रीमती के पास देखते ही हटाने दौड़ पड़ता है। मुझे दुख भी हुआ उस बच्ची के लिए। वो फिर वापस अपनी माँ के पास चली गई। उसके आँचल में छिप गई। फिर थोड़ी देर बाद उसकी माँ ने उसे खाने का कुछ दिला दिया।

थोड़ी देर बाद अभिराम दूध पीकर सो गया। हमें भी थोड़ा आराम हुआ। काले कपड़े हाथ में कमंडल लिए हुए एक आदमी कुछ मांगने आया। उसे भी मैंने जाने को कहा। कुछ देर बराबर में एक युवक-युवती बैठ कर चले गए। उनके जाने पर श्रीमती ने कहा कि वो ओडिया थे। शायद श्रीमती को ओडिया भाषा की कुछ समझ होगी। पास की एक सीट पर भारत के उत्तरपूर्वी क्षेत्र के तीन लोग बैठे थे। अपने साथियों की प्रतीक्षा कर रहे थे जो बाद में आए भी थे। कुछ देर बाद उनमें से एक औरत के चिल्लाने की आवाज आई तो मैंने पलट कर देखा। पास में बैठा एक कुत्ता उसपर झपटा था। श्रीमती ने बताया कि कुत्ता कूड़ेदान के पास बैठा था और उस औरत ने कुछ कूड़ेदान में फेंका था तभी वो भोंकने लगा। मुझमें तो एक पशुप्रेमी है पर श्रीमती आवारा पशुओं विशेषकर कुत्तों और गायों से अतिरिक्त सावधान रहती हैं और काफी हद तक उनका सोचना ठीक भी है। इस कुत्ते के प्रकरण में लेकिन मुझे लगा कि उस औरत ने घेर वाली ड्रेस पहनी हुई थी। शायद वो कुत्ता उससे डर कर भोंक रहा हो।

अभिराम के सोने के बाद और पहले से भी मैं वहाँ आने जाने वाले लोगों को देख रहा था। मैंने देखा कि कम उम्र के लोगों को छोड़कर बाकी सभी के शरीर बेडौल ही थे। इनमें मैं स्वयं भी सम्मिलित हूँ। शारीरिक व्यायाम का चलन हालांकि बीते कुछ वर्षों में बढ़ा है पर बहुत लोग अभी भी इससे अछूते हैं।

अब लगभग 7 बज चुके थे और अभिराम के उठने के बाद हम लोग बस स्टैण्ड से बाहर निकल गए। मुख्य द्वार से निकलने के बाद प्रांगण में ही कारों के बीच एक डेढ-दो साल का बच्चा जमीन पर खेल रहा था। फिर आगे नजर गई तो वहीं एक औरत बैठी थी जो आने जाने वालों से कुछ मांग रही थी। पास में ही आगे वो लंबे कंधे की ड्रेस वाली छोटी लड़की बैठी थी। शायद वो औरत ही उसकी माँ होगी। आसपास खाने की जगह नहीं मिलने पर मैंने स्टेशन से ऑनलाइन ऑर्डर कर दिया। साढ़े आठ बजे रेल आई फिर हम ग्वालियर की ओर रवाना हुए। होटल और रेल में हजारों रुपये लगने के बाद भी मुझे एक चिंता सता रही थी। 16 तारीख को ग्वालियर से निकलते हुए मैंने सुबह 5 बजकर 8 मिनट पर स्टेशन पार्किंग से स्कूटर की पर्ची कटवाई थी। रेल के विलंब से चलने के कारण सुबह 5 बजे के आसपास ही ग्वालियर पहुँचने का अनुमान था। मुझे लगा कि कहीं पार्किंग वाला 15-20 मिनट की देरी के लिए भी मुझसे पूरे दिन का किराया न मांग ले। ऐसा एक बार पहले मेरे साथ हो चुका था। लगभग साढ़े पाँच बजे हम पार्किंग से निकल पाए और किस्मत से मेरे 20 रुपये भी बच गए। इसके बाद सकुशल अपने घर को लौट आए।

श्रीमती जब परीक्षा देने गई थी तो होटल से सामान पैक कर मैंने चेकआउट किया था। जब घर आकार श्रीमती ने बैग खोले तो उसमें होटल की एक छोटी चम्मच निकली। छोटा बच्चा साथ में होने से हम अपने चम्मच-कटोरी-ग्लास ले गए थे तो उन्हें रखते हुए शायद मैंने होटल वाली चम्मच भी रख ली थी। ईश्वर के आशीष से यदि श्रीमती की परीक्षा पास होने पर साक्षात्कार हेतु पंचकुला फिर जाना हुआ तो याद रखना है कि होटल वालों की चम्मच लौटानी है।

लुप्तप्राय प्रजातियां

व्यंग्य

श्री लोकेश पाल
वरिष्ठ लेखापाल

हमारी पृथ्वी पर लाखों प्रजातियाँ मौजूद हैं, जो प्रकृति के संतुलन को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, परन्तु मानवीय गतिविधियों और पर्यावरणीय परिवर्तनों के कारण कई प्रजातियाँ आज लुप्तप्राय हो चुकी हैं। लुप्तप्राय प्रजातियाँ वो होती हैं, जिनके अस्तित्व पर खतरा मंडरा रहा है और यदि समय रहते उचित कदम न उठाए गए, तो वे पूरी तरह से विलुप्त हो सकती हैं।

कई एसी चीजें है, जो लुप्तप्राय होती जा रही हैं। घरों से आँगन, आँगन से पेड़, पेड़ से घोसलें, घोसलें से गौरैया जैसी अनेकों चीजें है जो अब हमारे जीवन से विलुप्तप्राय होने को हैं। परिवार से दादा-दादी, नाना-नानी, आँगन में लकड़ी की छड़ी और मेज, मेज पर रेडियो, रेडियो से चित्रहार अब हमारे जीवन से विलुप्तप्राय होने को हैं।

लुप्तप्राय प्रजातियों की स्थिति के लिए कई प्रकार के कारण होते है, मानवीय कारण एवं पर्यावरणीय परिवर्तनों होने के कारण जैसे कारक जिम्मेदार हैं। भारत में कई लुप्तप्राय प्रजातियां हैं, जिनमें से कुछ प्रमुख हैं भारतीय गैंडा, घड़ियाल, गंगा नदी डॉल्फिन, चिंकारा, काला हिरण, भारतीय बाइसन और असम छत वाला कछुआ। इसके अलावा, कई अन्य प्रजातियां भी लुप्तप्रायता के खतरे से जूझ रही हैं, जैसे कि हिम तेंदुआ, शेर-पूंछ वाला मैकाक और हूलॉक गिब्बन बंदर इत्यादि।

इन सबके बारे में तो आप सबने पढ़ा ही होगा, कि कैसे ये लाखों प्रजातियाँ लुप्तप्राय हुई या होने को हैं, कैसे इन प्रजातियों को संरक्षित एवं सुरक्षित किया जाना है, लेकिन आज हम लोग इनके अलावा उन लुप्तप्राय प्रजातियों के बारे में चर्चा करेंगे, जिसकी कहीं कोई चर्चा होती ही नहीं है।

आज, मैं आपको उन लुप्तप्राय प्रजातियों के बारे में बताना चाहता हूँ जो कभी हमारे जीवन का हिस्सा थीं, लेकिन अब धीरे-धीरे विलुप्त होती जा रही हैं या विलुप्त होने को हैं। इनमें डाकिया, पोस्टकार्ड, चिट्ठी, टेलीग्राम, मनीआर्डर, गुल्लक, दादी-नानी की किस्से-कहानियाँ जैसी अनेक उदाहरण हैं जो अब विलुप्तप्राय होने को हैं।

हमारे जीवन में कई ऐसी चीजें है, जो लुप्तप्राय होती जा रही हैं। घरों से आँगन, आँगन से पेड़, पेड़ से घोसलें, घोसलें से गौरैया जैसी अनेक चीजें है जो अब हमारे जीवन से विलुप्तप्राय होने को हैं। परिवार से दादा-दादी, नाना-नानी, आँगन में लकड़ी की छड़ी और मेज, मेज पर रेडियो, रेडियो से चित्रहार अब हमारे जीवन से विलुप्तप्राय होने को हैं। गाँव से खेत, खेतों से किसान, किसान से हल, हल से बैल यकीन मानिये ये सब, अब हमारे जीवन से विलुप्तप्राय होने को हैं।

अगर आप लोग मुझसे सहमत हैं, तो ये एकदम पक्का है की, ना तो आपने किसी रिश्तेदार, मित्र या प्रियजन को कभी पोस्टकार्ड, चिट्ठी, टेलीग्राम, पत्र लिखा है, ना ही आपके पास कभी कोई गुल्लक रही होगी, ना ही आपने कभी दादी-नानी से कोई किस्से-कहानियाँ सुनी होगी।

आपने घर के आंगन के पेड़ पर गौरैया के घोसले में सुबह-सुबह चहकते हुए गौरैया को नहीं देखा होगा, संध्या में खाट पर बैठ कर दादी-नानी से कोई किस्से-कहानियाँ सुनने की बात ही अलग है।

मेहनत-कश किसान और उसके खेत, उसका हल, उसके बैल, और किसान का संघर्ष, ये सब तो आपने केवल किताबों में ही पढ़ा या देखा होगा।

आपके पास इन सबके बदले होगा,............. एक वाई-फाई/इन्टरनेट, एक स्मार्ट-फोन, दो सिम-कार्ड, एक फेसबुक/ट्विटर अकाउंट, यूट्यूब रील्स या एक अदद व्हाट्सअप और एकाकी जीवन।

आपको पता ही नहीं है कि पोस्टकार्ड/पत्र लिखना और डाकिए का इंतज़ार करना एक भावनात्मक अनुभव था। डाकिया अपनी वर्दी में, साइकिल पर चिट्ठियाँ लेकर आता था। किसी पत्र में प्रेम, किसी पत्र में अपनापन, किसी पत्र में दुःख और किसी में अनेक प्रकार की कहानियाँ होती थीं।

लेकिन आज इन्टरनेट, ईमेल और व्हाट्सएप ने पत्रों की जगह ले ली है। डाकिया अब गाँव-शहरों में कम ही दिखता है, और यकीन मानिये कुछ समय बाद शायद वे भी लुप्तप्राय प्रजातियों में गिना जाए।

एक समय था जब टेलीग्राम संदेश भेजने का सबसे तेज़ और विश्वसनीय माध्यम था। लोग इसे शुभ समाचार, जैसे जन्म, विवाह, दुखद खबरों के लिए इस्तेमाल करते थे, लेकिन मोबाइल फोन और इंटरनेट के आगमन के साथ ही टेलीग्राम की चमक फीकी पड़ गई। अब यह केवल यादों में ही बस्ता है। भारत में सबसे पहले विद्युत टेलीग्राफ की शुरुआत 1850 में डायमंड हार्बर और कोलकाता के बीच हुई थी और आखिरी तार (टेलीग्राम) 15 मई 2013 को भेजा गया था।

“क्या आपको याद है कि आपने किसी रिश्तेदार एवं मित्र को कभी पोस्टकार्ड या पत्र लिखा हो, या आपके पास आपके किसी रिश्तेदार एवं मित्र का पोस्टकार्ड या पत्र आया हो.....................रहने दीजिये, मत याद करिये, याद नहीं आएगा।”

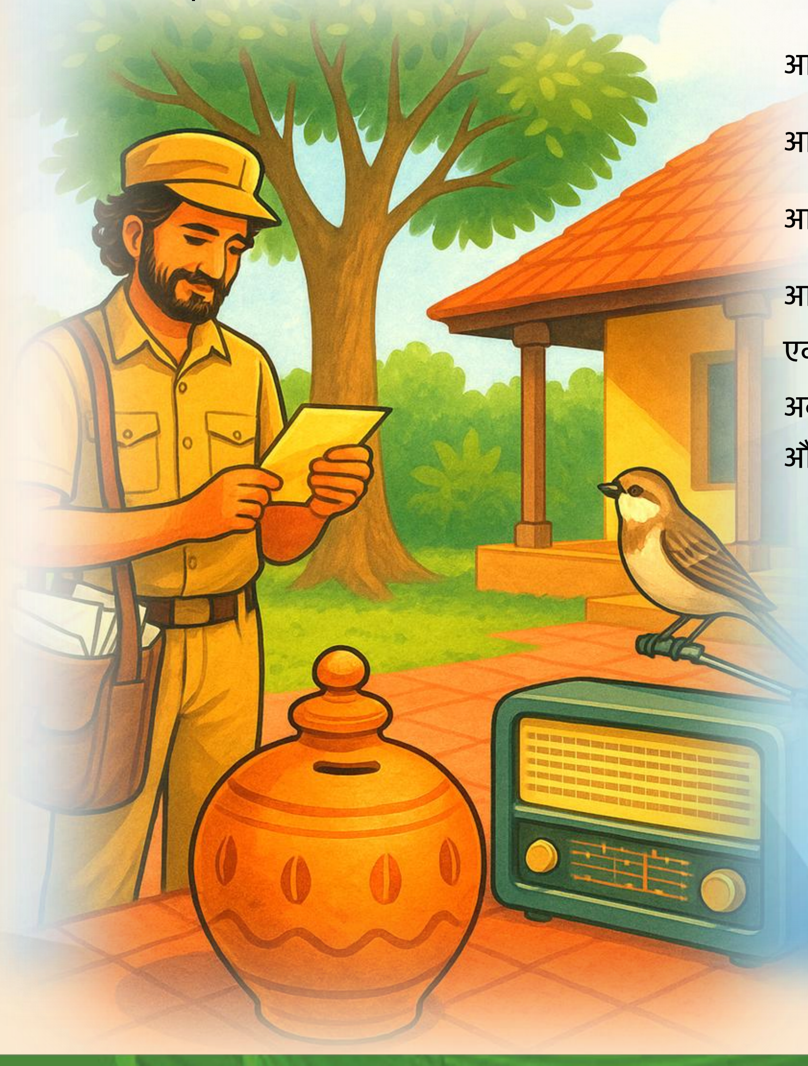

आपके पास है, ...।

आपके पास है, ...।।

आपके पास है, ...।।।

आपके पास है, ... एक वाई-फाई/इन्टरनेट, एक स्मार्ट-फोन, दो सिम-कार्ड, एक फेसबुक/ट्विटर अकाउंट, यूट्यूब चैनल-रील्स या एक अदद व्हाट्सअप और एक एकाकी जीवन।

नैमिषारण्य धाम

यात्रा-वृत्तांत

श्री सुगंध कुमार वर्मा
सहायक लेखा अधिकारी

ऐसे तो भारत में अनेक तीर्थस्थल है जोकि न केवल धार्मिक महत्व रखते हैं. बल्कि ये प्राकृतिक सौंदर्य और सांस्कृतिक विरासत के भी प्रतीक है. इन स्थलों पर जाने से न केवल आत्मिक शांति मिलती है बल्कि हमें अपने देश का समृद्ध इतिहास और संस्कृति को जानने का अवसर भी प्राप्त होता है।

आज मैं इस लेख के माध्यम से एक ऐसे ही तीर्थ स्थल के बारे में बात करूंगा जोकि मेरे शहर में स्थित है। नैमिषारण्य धाम, जिसे नमिसार और नैमिष धाम के नाम से भी जाना जाता है। नैमिषारण्य धाम भारत के उत्तर प्रदेश राज्य के सीतापुर जिले में स्थित है। सीतापुर से नैमिष धाम की दूरी 40 किलोमीटर है। और उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ से यह दूरी 90 किलोमीटर है। यहां का निकटतम रेलवे स्टेशन मिश्रिख तीर्थ स्टेशन है, जोकि लखनऊ, सीतापुर, दिल्ली और कानपुर से सीधा जुड़ा है। लखनऊ और सीतापुर से बसें नियमित रूप से चलती हैं। निजी वाहन या टैक्सी से यात्रा और भी सुविधाजनक रहती है। सबसे निकट लखनऊ का चौधरी चरण सिंह हवाई अड्डा है, जहाँ से नैमिषारण्य लगभग 95 किलोमीटर दूर है।

नैमिष धाम एक स्थान है जो धार्मिक दृष्टि से बहुत अधिक पवित्र और मोक्ष दायिनी है। इस स्थान का उल्लेख हिन्दु धर्म ग्रन्थों में मिलता है। और उनमें इससे संबंधित बहुत सी कहानियां बताई गई हैं। यह एक ऐसा पवित्र स्थान है जिसे स्वयं ब्रह्मा जी के चक्र द्वारा खोजा गया था साथ ही यही वह स्थान है जहां भगवान राम ने अश्वमेध यज्ञ किया था एवं महर्षि व्यास जी ने लोगो को पुराणों की शिक्षा दी थी

यहां बना चक्रतीर्थ इस जगह का प्रमुख आकर्षण और प्राचीनतम सरोवर है ऐसा माना जाता है कि बहुत से ऋषि मुनि एक पवित्र स्थान की तलाश में ब्रह्मा जी के पास पहुंचे और उनसे एक ऐसे स्थान के बारे में पूछा जो ध्यान करने के लिए पवित्र हो तब ब्रह्मा जी के मन से एक चक्र उत्पन्न हुआ ओर ब्रह्मा जी ने कहा की यह चक्र जिस भी स्थान पर गिरेगा वही सबसे पवित्र स्थान होगा। चक्र आकर नैमिषारण्य में गिरा इसी वजह से इस जगह को ऋषि मुनियों की तपोस्थली कहा जाता है।

यहां मैं जब-जब गया हूँ, तो सड़क मार्ग से ही गया हूं, सड़क दोनों ओर पेड़ों की कतारों से घिरी हुई

है, रास्ते में जगह-जगह छोटे मंदिर और चाय की दुकानें देखी जा सकती हैं। लखनऊ से 90 किलोमीटर की यात्रा के बाद जब "नैमिषारण्य" लिखा बोर्ड दिखाई देता है तो एक अजीब सी आध्यात्मिक अनुभूति होने लगती है जैसे किसी अदृश्य शक्ति ने मन को शांत कर दिया हो।

नैमिष धाम के प्रमुख दर्शनीय स्थल

चक्रतीर्थ – पवित्रता का केंद्र

नैमिषारण्य पहुँचते ही सबसे पहले चक्रतीर्थ पड़ता है। यहाँ एक विशाल सरोवर है, जिसका मध्य भाग गोलाकार है और उसमें से लगातार जल निकलता रहता है। उस मध्य के घेरे के बाहर स्नान करने का घेरा है। यही नैमिषारण्य का मुख्य तीर्थ है। इसके अनेक मंदिर है। मुख्य मंदिर भूतनाथ महादेव का है। चक्रतीर्थ

की बड़ी महिमा है। एक बार अट्ठासी हजार ऋषि मुनियों ने ब्रह्मा जी से निवेदन किया कि जगत कल्याण के लिये तपस्या हेतु विश्व में सौम्य और शान्त भूमि का निर्देश करें। उस समय ब्रह्मा जी ने अपने मन से एक चक्र उत्पन्न करके ऋषियों से कहा कि इस चक्र के पीछे चलकर उसका अनुकरण करो, जिस भूमि पर इस चक्र की नेमि अर्थात मध्य भाग स्वतः गिर जाये तो समझ लेना कि पृथ्वी का मध्य भाग वही है तथा विश्व की सबसे दिव्य भूमि भी वही है इस परम पवित्र भूमि के दर्शन मात्र से असीम सुख की अनुभूति होती है। जब-जब मैंने सरोवर के किनारे खड़े होकर उस जल को देखा है, तो ऐसा लगता है जैसे समय वहीं ठहर गया हो, सरोवर के चारों ओर बने प्राचीन मंदिर अपनी गंभीरता और शांति से मन को मंत्रमुग्ध कर देते हैं।

ललिता देवी मंदिर – शक्ति का अद्भुत केंद्र

चक्रतीर्थ से कुछ दूरी पर स्थित ललिता देवी का मंदिर है, जिसे नैमिषारण्य का हृदय कहा जाता है। ललिता देवी मंदिर माता के 108 शक्ति पीठों में से एक है। ऐसा माना जाता है कि जब माता सती अपने पिता राजा दक्ष के द्वारा कहे अपशब्द को न सह सकी तब

उन्होंने यज्ञ कुंड में कूद कर अपनी जान दे दी। तब शंकर जी ने माता सती के शरीर को उठाकर तांडव करना शुरू कर दिया जिससे पृथ्वी के नष्ट होने का खतरा बन गया। तब विष्णु जी ने माता के शरीर के 108 टुकड़े कर दिए और यह शरीर के हिस्से पृथ्वी पर जहां-जहां गिरे वहां एक शक्ति पीठ का निर्माण हुआ। नैमिषारण्य धाम में माता का हृदय गिरा था जिस वजह से इस मंदिर को माता के शक्ति पीठ में से एक माना जाता है।

मंदिर के गर्भगृह की दिव्यता शब्दों से परे हैं। आरती की घंटियाँ, दीपों की रौशनी और भक्तों की श्रद्धा – सब कुछ मिलकर एक ऐसा वातावरण बनाते हैं जहाँ आस्था सजीव प्रतीत होती है।

पांडव किला – इतिहास की गूंज - इसके बाद मैं पहुँचा पांडव किला। यह स्थान देखने में एक छोटे किले की तरह है, जिसके भीतर भगवान श्रीकृष्ण और पांडवों की

मूर्तियाँ स्थापित हैं। पांडव किला के बार में मान्यता है कि पांडव वनवास के दौरान इसी किले में आकर रुके थे। इस किले में आप भगवान कृष्ण और पांडवों के दर्शन कर सकते हैं।

किले के पत्थरों को छूते हुए ऐसा लगा जैसे महाभारत काल की गाथाएँ अब भी इन दीवारों में गूँजती हों। वातावरण में रहस्यमयी शांति और गंभीरता है, जैसे इतिहास खुद मौन होकर कुछ कह रहा हो।

हनुमान गढ़ी – भक्ति और बल का संगम

पांडव किले से थोड़ी दूरी पर स्थित हनुमान गढ़ी मंदिर एक अत्यंत भव्य और आकर्षक मंदिर है। यहाँ की ऊँचाई से पूरा नैमिषारण्य दिखाई देता है। सीढ़ियाँ चढ़ते हुए मन में "जय बजरंगबली" की गूंज अपने आप निकलती है।

मंदिर के भीतर विशाल हनुमान प्रतिमा के दर्शन करते समय एक अपार ऊर्जा का अनुभव होता है – जैसे हर चिंता, हर भय वहीं समाप्त हो जाए।

चार धाम मंदिर – एक ही स्थान पर चारों धामों का दर्शन

नैमिषारण्य की एक और विशेषता है – **चार धाम मंदिर**। यहाँ **जगन्नाथपुरी, बद्रीनाथ, द्वारकाधीश** और **रामेश्वरधाम** – चारों धाम के प्रतिरूप एक ही परिसर में बने हैं।

इन मंदिरों के बारे में कहा जाता है कि इन मंदिरों को महर्षि गोपाल दास जी ने बनवाया था। महर्षि गोपाल दास जी उन महा ऋषियों में से एक थे जिन्होंने चारों धाम की यात्रा पूर्ण करने के बाद यहां पहुंचे और उन्होंने यहां चार धाम मंदिरों का निर्माण कराया ताकि जो भक्त दूर-दूर तक यात्रा नहीं कर सकते, वे यहाँ एक ही स्थान पर सभी धाम के दर्शन कर सकें। वास्तव में यहाँ खड़े होकर ऐसा लगता है जैसे सम्पूर्ण भारत की आस्था एक ही स्थान पर सिमट आई हो।

व्यास गद्दी – ज्ञान की भूमि

इसके बाद में व्यास गद्दी आती है, व्यास गद्दी के पास एक वटवृक्ष है। इसी गद्दी पर व्यास जी ने बैठकर वेद पुराणों की शिक्षा अपने शिष्यों को दी थी तब से यह स्थान व्यास गद्दी कहलाता है।

इस वटवृक्ष की छांव में एक गहरी शांति का अनुभव होता है। मंदिर परिसर में गूंजते श्लोकों और हवन की सुगंध से वातावरण आध्यात्मिक ऊर्जा से भरा होता है।

दधीचि कुंड – त्याग का प्रतीक

दधीचि कुंड मिश्रिख क्षेत्र में नैमिषारण्य से लगभग 12 किलोमीटर दूर स्थित है। महर्षि दधीचि एक महान तपस्वी और परोपकारी ऋषि थे, जो अथर्वा के पुत्र थे जब नैमिषारण्य में 84 कोसी परिक्रमा होती है। जो महर्षि दधीचि की पावन भूमि से शुरू होती है यहां दधीचि कुंड भी बना हुआ है, जो आज भी निर्मल जल से भरा है। ऐसी मान्यता है कि जिसमें स्नान करने से सभी दुखों का निवारण होता है। कहा जाता है कि यहां पर महर्षि दधीचि ने समाज के कल्याण के लिए अपने प्राणों की आहुति देकर देवराज इंद्र को अपनी अस्थियां दान की थी उनकी अस्थियों से ही इंद्र का हथियार वज्र बना जिससे इंद्र ने दैत्यों का वध किया था।

यहाँ आने पर मन में असीम श्रद्धा और त्याग का भाव उमड़ता है।

नैमिषारण्य – एक ऐसा अनुभव जो आत्मा में बस जाता है

नैमिषारण्य की यह यात्रा मेरे लिए सिर्फ एक धार्मिक भ्रमण नहीं है, बल्कि मुझे यह मेरे अंतरमन की यात्रा लगती है। यहाँ की मिट्टी में साधना की सुगंध है, यहाँ का जल मन को पवित्र कर देता है और यहाँ की हवा में शांति घुली हुई है।

जब-जब मैं यहां से लौटा हूँ तो ऐसा लगा जैसे भीतर कुछ बदल गया है – मन अधिक शांत, आत्मा अधिक स्थिर और हृदय अधिक कृतज्ञ हो जाता है।

सच में, मेरे विचारों में **नैमिषारण्य केवल एक स्थान नहीं, यह एक अनुभव है – जहाँ जाकर मनुष्य स्वयं से मिल पाता है।**

वेदों में नारी

लेख

सुश्री निशा कुमारी
वरिष्ठ अनुवादक

"किसी भी राष्ट्र के विकास के लिए महिलाओं के सशक्तिकरण से अधिक प्रभावी उपाय कुछ नहीं है।" इस कथन से अधिक सटीक तरीके से महिलाओं की क्षमता का परिचय और क्या हो सकता है? मानव सभ्यता की सर्वाधिक रहस्यात्मक अनुभूति को संजोए, समाज में माँ बहन, पत्नी, प्रेयसी, बालिका, नायिका के विभिन्न रूपों में जीवनदायिनी, मोक्षदायिनी आदि संज्ञाओं से विभूषित नारी सृष्टि की उत्पत्ति से लेकर वर्तमान काल तक अपने अस्तित्व के लिए संघर्षरत है। निःसंदेह आधुनिक समय में नारी लैंगिक बाधाओं को लांघती हुई अपने लिए मुकम्मल स्थान बना रही है। उसकी सामाजिक, आर्थिक कुछ हद तक पारिवारिक एवं मानसिक स्थिति में काफी बदलाव आया है. वह शिक्षक, प्रबंधक राजनेता के साथ-साथ पर्वतारोही, पायलट और सशस्त्र सेनाओं में भी नजर आ रही है। इसका आशय है कि नारी स्वावलंबी बन रही है और कुछ स्थानों पर वह आश्रयदाता भी है। लेकिन यह तो समाज का केवल सुनहरा पक्ष है।

> वैदिककाल में स्त्रियों की शिक्षा व्यवस्था उन्नत अवस्था में थी। स्त्रियाँ उच्च शिक्षा प्राप्त करती थीं। ऋग्वेद में और अथर्ववेद में 5 मंत्रद्रष्टा ऋषिकाओं का उल्लेख मिलता है। ये 422 मंत्रों की द्रष्टा हैं। अपाला आत्रेयी, घोषा, सिकता निवावरी, इन्द्राणी पौलोमीशची, रोमशा, अदिति, वाक्आम्भृणी आदि कुछ मंत्रद्रष्टा ऋषिकायें हैं।

इसका दूसरा पक्ष भी है जहाँ आज भी नारी समस्या ग्रस्त है। आज भी पुरुषों के अत्याचारों को प्रसाद के रूप में ग्रहण करनेवाली महिलाओं की एक लम्बी भीड़ दिखाई देती है, भारत में नहीं, बल्कि दुनिया के ज्यादातर देशों की महिलाएं आज भी भेदभाव का शिकार और निर्णय लेने की प्रक्रिया से बाहर रखी जाती है, वंचित और अधिकार विहीन है, कन्या भ्रूण हत्या, दहेजप्रथा, लैंगिक भेदभाव का सामना आज भी उन्हें करना पड़ता है। 'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ' कार्यक्रम चलाने की आवश्यकता इन्हीं समस्याओं की एक कड़ी है। इन सबका निहितार्थ यही है कि व्यक्तिगत सफलता और सामूहिक सफलता में अंतर अभी बाकी है।

प्रश्न उठता है कि जब नर-नारी सृष्टि की प्रमुख नियामक है तब नारी के साथ इतना अन्याय क्यों? क्या सभी समाजों में और सभी कालों में नारी की यही स्थिति रही है अथवा बाद की अवस्थाओं में ये परिवर्तन आये। इन्हीं जिज्ञासाओं के अन्वेषण के लिए 'वेदों में नारी' यह विषय चुना गया है। साहित्य समाज का दर्पण कहा जाता है, अर्थात् तत्कालीन साहित्य में तत्कालीन समाज का प्रतिबिंब झलकता है। इसीलिए किसी भी काल या देश का सही चित्र देखने के लिए हमें उस देश व काल के साहित्य में झांकना पड़ता है।

सम्पूर्ण वैदिक वाङ्मय हमारे देश की सांस्कृतिक धरोहर है। विश्व के प्राचीनतम ग्रन्थ होने के कारण इसमें मानव जाति का प्रारंभिक इतिहास समाहित है। वैदिक वाङ्मय के अध्ययन से यह विदित होता है कि वैदिक समाज में नारियों का स्थान अत्यन्त गौरवपूर्ण एवं सम्माननीय था। वेदों में वर्णित नारी देवी है, विदुषी है उपदेशिका है, शिक्षिका है, आदर्शमाता है, कर्तव्यनिष्ठा धर्मपत्नी है, सदगृहणी है, सम्राज्ञी है, वीरांगना है। वैदिक ऋषियों ने स्त्री और पुरुष को जीवन की गाड़ी के दो पहिये मानकर, स्त्रियों को पुरुषों के समकक्ष ही स्थान दिया है। शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है कि पत्नी पुरुष की आत्मा का आधा भाग है- **'अर्थो हवा एष आत्मनो यज्ञाया।।'**

मातृरूप में नारी को अत्यन्त आदरणीय स्थान प्राप्त था। ऋग्वेद में स्त्री को सृष्टि चक्र के ब्रह्मा के रूप में प्रतिपादित किया गया है। जैसे-

अधः पश्यस्व मोपरि संतरां पादको हर।
मा ते कशल्पकौ दृशन्त्यस्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ ।।

ऋग्वेद में माता के लिए कहा गया है कि उसकी शक्ति महान है मातुर्महि स्थमच ही रूप में नारी का महत्व दर्शाते हुए ऋग्वेद में 'जायेदस्तम्' कहा गया है अर्थात् न सास-ससुर, देवर एवं ननद को सम्राज्ञी कहा गया है-

सम्राज्ञी श्वसुरे भव साम्राज्ञी श्वश्रवां भव।
ननान्दरि सम्म्राज्ञी भव सम्म्राज्ञी आदिदेवृषु॥

पत्नी शब्द का प्रयोग भी ऋग्वेद में प्राप्त होता है **अग्ने पत्नीरिहा वह देवानामुशतीरूपसामपीतये।**

दयानन्द सरस्वती ने यास्क कृत निरूक्ति के आधार पर पत्नी को पालन करने की शक्तिवाला कहा है। उनके अनुसार 'प्रकृति का जो तत्व जिस शक्ति को धारित करता है वह धारित शक्ति ही उसकी पत्नी है।' पाणिनि के अनुसार यज्ञ के संयोग से स्त्री पत्नीत्व को प्राप्त करती है।

स्त्री के लिए 'कुलयिनी' एवं 'पुरन्ध्रि' शब्दों के प्रयोग से यह विदित होता है कि वह कुटुम्ब की पालनकर्त्री थी- 'कुलयिनी घृतवती पुरन्धिः स्योनेसीद सेदन पृथिव्याः। यजुर्वेद में ही नारी को विजयिनी, सहस्रवीर्या, शत्रुओं का संहार करने वाली तथा उनसे मोर्चा लेने वाली कहा गया है-

अषादासि सहमाना सहस्वारातीः सहस्व पृतनायत।
सहस्त्रीवीर्या सिसामा जिन्वः ।।

वैदिक वाङ्मय के आधार पर वैदिक समाज में प्रचलित रीतियों एवं परम्पराओं का ज्ञान होता है। इनके आधार पर नारी की स्थिति का अवलोकन किया जा सकता है। यथा वैदिक समाज में प्रचलित शिक्षा व्यवस्था, विवाह व्यवस्था, दहेजप्रथा, पर्दाप्रथा आदि के आधार पर स्त्रियों की तत्कालीन सामाजिक स्थिति का आकलन किया जा सकता है।

वैदिककाल में स्त्रियों की शिक्षा व्यवस्था उन्नत अवस्था में थी। स्त्रियाँ उच्च शिक्षा प्राप्त करती थीं। ऋग्वेद में और अथर्ववेद में 5 मंत्रद्रष्टा ऋषिकाओं का उल्लेख मिलता है। ये 422 मंत्रों की द्रष्टा हैं। अपाला आत्रेयी, घोषा, सिकता निवावरी, इन्द्राणी पौलोमीशची, रोमशा, अदिति, वाक्आम्भृणी आदि कुछ मंत्रद्रष्टा ऋषिकायें हैं। इसके साथ ही नारियों के संगीत, नृत्य, अभिनय, शस्त्र शिक्षा आदि कलाओं की शिक्षा ग्रहण करने का भी वर्णन वेदों में मिलता है। आचार्य दयानन्द के अनुसार ऋग्वैदिक समय में वाणी के समान विद्या और सुशिक्षा से युक्त विदुषी स्त्री सरस्वती कहलाती थी। ऋग्वेद में कहा गया है-

यावयद् द्वेषा ऋतवा ऋतेजाः सुम्नावरी सूनृता ईरयन्ती।
सुमङ्गलीर्बिभ्रती देववीति मिहा घोषः श्रेष्ठतमाव्युच्छ॥

ऋग्वेद में कहा गया है कि जो रानी धनुर्वेद जानती हुई अस्त्र शस्त्र चलाने वाली हैं, वीरों द्वारा उसका आदर किया जाना चाहिए- **राज्ञी धनुर्वेदविच्छस्तास्त्र प्रक्षेप्त्री वर्तते तस्या वीरैः सत्कारः सतत कार्य्यः ॥**

स्त्रियाँ राजाओं के साथ युद्धों में भी जाती थीं। इन्द्राणी के लिए कहा गया है कि वह शत्रु सेना को काटते हुई आगे बढ़ती है- शत्रुओं से युद्ध करती हुई खेल की पत्नी रानी विश्पला का भी उल्लेख मिलता है। जिसका पैर कट गया था जिसे अश्विनी कुमारों ने नकली लोहे के पैर लगा दिये थे जिससे वह पुनः युद्ध में भाग ले सके।

वैदिककाल में मुख्यतः दो प्रकार की स्त्रियों का वर्णन हैं- 1. सद्योदवाहा, 2. ब्रह्मवादिनी। सद्धोदवाहा स्त्रियाँ ब्रह्मचर्याश्रम की समाप्ति के पश्चात् गृहस्थाश्रम में प्रवेश करती थी और गृहस्थाश्रम के नियमों का पालन करते हुए मातृत्व के गरिमामय पद को सुशोभित करती थीं। इनकी विवाह की अवस्था 16-17 के लगभग होती थी। दूसरे प्रकार की स्त्रियाँ जो ब्रह्मवादिनी होती थीं आजीवन अविवाहित रहते हुए अध्ययन, अध्यापन, शास्त्रार्थ, तप-योग आदि पूर्वक जीवन बिताती थी।

शिक्षा ग्रहण के उपरान्त योग्य वर वधू का विवाह होता था। वैदिककाल में तीन प्रकार के विवाहों का पता चलता है- क्षात्र विवाह, स्वयंवर तथा प्राजापत्य विवाह। क्षत्रियों में स्वयंवर विवाह पद्धति प्रचलित थी। विवाह के अवसर पर स्त्री को अपने पति चुनने का पूर्ण

अधिकार था **'एयमगन् पतिकामा जनिकामोऽहमागभम्।**

सामान्य जनों में प्राजापत्य विवाह प्रचलित था इसमें विवाह के लिए माता-पिता की स्वीकृति आवश्यक थी। अनुत्वा माता मन्यताम् अनु पिता, अनुभ्राता सगर्थ्यः। बहुविवाह का भी प्रचलन था।

दहेजप्रथा स्त्रीधन एवं उपहारादि के रूप में प्रचलित थी। दहेज के लिए 'वहतु' शब्द का प्रयोग मिलता है। लेकिन दहेजप्रथा वर्तमानकाल के समान विकृत रूप में प्रचलित नहीं थी। कन्या का पिता स्वेच्छा से जो धन देता था उसे ही दहेज रूप में लिया जाता था। पर्दाप्रथा का स्पष्टत उल्लेख नहीं मिलता है। गार्गी आदि ब्रह्मवादिनी नारियाँ सभाओं में जाती थीं। याज्ञवल्क्य से गार्गी के शास्त्रार्थ का वर्णन प्राप्त होता है। सतीप्रथा का प्रचलन वैदिककाल में नहीं था क्योंकि अथर्ववेद में मृत्यु को प्राप्त व्यक्ति की पत्नी को कहा गया है कि वह शोक त्यागकर अपने बच्चों का पालन-पोषण करें।

समय परिवर्तन होने के साथ-साथ समाज में परिस्थिति भी बदलती गई। ऐतेरय ब्राह्मण काल के समाज में नारी-शिक्षा बिलकुल ही निम्न स्तर पर थी। जिसका प्रमुख कारण था भारत पर विदेशियों का आक्रमण, इन विदेशियों का एक ही लक्ष्य होता था कि यहां के जलाशयों एवं नारियों को दूषित करना जिससे समाज में स्त्री-रक्षा करना कठिन तपस्या के समान हो गया था। जिससे कुछ लोग प्रभावित होकर पुत्री को कष्ट का कारण मानने लगे थे परंतु भ्रूण हत्या या नवजात कन्या वध का कोई संकेत नहीं मिलता है।

सखाहि जाया कृपणं हि दुहिता ज्योतिर्हि पुत्रः।। (ऐतेरय ब्राह्मण)

समय परिवर्तन के साथ देखा जाए तो रामायण एवं महाभारतकाल में भी नारी सर्वाधिक उच्च स्थान पर प्रतिष्ठित थी। रामायण के युद्ध काण्ड में एक प्रसंग है कि विपत्ति में, युद्ध के अवसर, स्वयंवर, यज्ञ और विवाह के समय स्त्री को सब के मध्य आना अनुचित कार्य नहीं था- **व्यसनेषु च कृच्छेषु युधे नो स्वयंवरे।**
न क्रतौ न विवाह च दर्शनं दुष्यितः स्त्रियः।। (वाल्मीकि रामायण) इस प्रसंग से यह स्पष्ट होता है कि स्त्री को अपनी रक्षा स्वयं करने में किसी भी प्रकार का संकोच नहीं करना चाहिए। महाभारत में सतीप्रथा का प्रसंग प्राप्त होता है, परंतु ऐसा नहीं था कि जिसके पति की मृत्यु हो जाए उसे सती होना ही पड़ेगा। इस समय स्त्री स्वतंत्र थी, उसकी इच्छा पर आधारित था कि वह सती होना चाहती है या नहीं। यथा कृष्ण की मृत्यु का समाचार सुनकर उनकी आठ पटरानियों में से पांच रुक्मिणी, गांधारी, सह्या, हेमावती तथा जाम्बवती पति की मृत देह के बिना ही चितारोहण करती हैं, किंतु सत्यभामा सती न होकर तपस्या करने के लिए वन चली गई, उसी तरह पाण्डु की मृत्यु के बाद केवल माद्री ही पश्चाताप के कारण सती होती है, कुंती नहीं। इससे स्पष्ट होता है कि महाभारत के समय सती होना कोई आवश्यक नहीं था।

बृहत्संहिता में नारी को सबसे उत्तम स्थान प्राप्त है बृहत्संहिता में नारी के प्रसंग में इस प्रकार कहा गया है - ब्रह्मा ने स्त्रियों के अतिरिक्त कोई ऐसा रत्न नहीं बनाया है जिसके सुनने, देखने या स्मरण करने से ही आनन्द की प्राप्ति होती है। स्त्री के द्वारा संतान सुख मिलता है तथा गृह में लक्ष्मी का स्वरूप होती है। अतः मान तथा भावों के द्वारा स्त्री का सदा आदर करना चाहिए-

श्रुतं दृष्टं स्पृष्टं स्मृतमपि नृणां ह्लादजननं
न रत्नम स्त्रीभ्योअन्यत् क्वचिदपि कृतं लोकपतिना।
तदर्थं धर्माथौं सुतविषय सौख्यानि च ततो
गृह लक्ष्मयो मान्याः सततमबला मान विभवैः।।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है वैदिककाल में नारियों की स्थिति सम्माननीय थी, स्त्री का महत्व बताते हुए कहा गया है कि जिस परिवार में स्त्री का सम्मान किया जाता है वह परिवार हमेशा विकासोन्मुख होता है, उन्हें अनेक सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक अधिकार प्राप्त थे। जिनसे उनको बौद्धिक और आध्यात्मिक विकास का अवसर प्राप्त होता था और वे सम्माननीय जीवन व्यतीत करती थीं। वर्तमान समय में प्रचलित अनेक कुरीतियाँ यथा बाल-विवाह, बालकों एवं बालिकाओं की शिक्षा में भेदभाव, पर्दाप्रथा आदि तथा मध्यकालीन सतीप्रथा आदि का प्रचलन नहीं था। इसलिए सम्प्रति नारियों की स्थिति में सुधार के लिए वेदों से सीखने की आवश्यकता है।

एक यात्रा जगन्नाथ महाप्रभु की

यात्रा-वृत्तांत

सुश्री पुष्पा साहू
कनिष्ठ अनुवादक

कहते हैं जब तक बुलावा नहीं आता हम किसी तीर्थ स्थान की ओर रूख नहीं करते। बस बात करते और सोचते रह जाते हैं। वैसे ही काफी समय से आपस में चर्चा होती थी कि पुरी जाना है जगन्नाथ महाप्रभु के दर्शन के लिए। अंततः वो समय भी आया और हमारे भाग्य खुले। दिसंबर 2024 में सपरिवार दर्शन करने जाने का कार्यक्रम निर्धारित हुआ। अब इस यात्रा के लिए सबसे कठिन कार्य था बच्चों को मनाना ताकि वो साथ चलें। दोनों ही इस वर्ष घर से बाहर निकलने को तैयार नहीं थे। उस पर भी एक हफ्ते का समय निकालना तो उनके लिए और भी ज्यादा कठिन, कारण करने के लिए कही। उनके अंदर का डर दूर करने के लिए मैंने उनसे बात करने की ठानी और किसी तरह उन्हें राजी किया कि अगर यह ट्रिप उनको पसंद न आई तो अगली बार से कहीं भी चलने की जिद नहीं करूंगी। फिर क्या था, हो गए तैयार।

शुरू हुई तैयारी, बंध गए सूटकेस और आ गया दिन यात्रा के आरंभ का। सभी उत्साहित थे खासकर मैं। बचपन से ही न मुझे घूमना बड़ा पसंद रहा है। लेकिन कभी कहीं घूमने जा ही नहीं पाई। मायके में कहते थे, शादी के बाद घूमना। तो कभी घूमना हो ही

था सिर पर खड़ी बोर्ड की परीक्षा 10वीं और 12वीं की। कारण तो गंभीर था ही, क्योंकि परीक्षा का डर तो सदियों से चला आ रहा है। इस दौरान घूमना-फिरना तो दूर की बात लोग अपने ही घर में खुद को कैद कर लेते हैं पढ़ाई और एकांत में, एकाग्रता के नाम पर। मुझे नहीं पता कि यह कितना सही है और कितना कारगर। मैंने कभी ऐसी पढ़ाई न की है न ही कभी अपने बच्चों से

नहीं पाया मेरा। पर शौक तो शौक है, कहां कभी खत्म होता है। पिछले 2-3 सालों से घूमने के शौक पूरा हो रहा है। इसी कड़ी में अगली यात्रा पुरी की आई। ग्वालियर से पुरी सीधी ट्रेन थी, लगभग 35 घंटों का सफर था। लेकिन उस ट्रेन में सीटें उपलब्ध न होने के कारण दूसरी ट्रेन से जाना पड़ा। 2-4 घंटे और अधिक लगे और सफर कुछ ज्यादा थकाने वाला हो गया। रात

के एक बजे के आसपास पहुंचे पुरी स्टेशन। स्टेशन की भीड़ को देखकर लग नहीं रहा था कि इतनी रात हो गई है, चारों तरफ यात्रियों की चहल-पहल रात को जीवंत कर रही थी। खैर हम स्टेशन से बाहर आए और रहने के लिए पूर्व निर्धारित स्थान की ओर प्रस्थान किया। वहाँ पहुँच कर हमें घोर निराशा का सामना करना पड़ा। जहाँ रहने के लिए व्यवस्था की थी वह शासकीय कॉलोनी का एक हिस्सा था, जिसे गेस्ट हाउस की तरह उपयोग किया जाता था। आधी रात के बाद जब हम वहाँ पहुँचे तो वहाँ सन्नाटा पसरा हुआ था। ऑटो वाले ने जोर-जोर से आवाज लगाई तब कहीं जा कर दरबान महोदय की नींद खुली। पर जनाब नशे में धुत थे और जाने अनजाने हमने उनकी नींद में खलल डाला था। फिर क्या था, बुकिंग लेटर दिखाने पर भी उन्होंने हमें ये कहा कि इस नंबर के कमरे किधर हैं मुझे नहीं पता। बड़ी अर्जी विनती की, कि इतनी रात को हम कहां भटकते फिरेंगे। साथ में सासु मां भी थीं और बच्चे तो थे ही। पर उस समय दरबान महोदय ने एक न सुनी। मुझे लगा इतनी अकड़ है किस बात की इनमें? शायद नशे में खुद को उस कॉलोनी का मालिक समझ रहा था या तो उसे सच में इतनी पावर दे दी गई थी कि वो किसी भी आगंतुक के साथ ऐसे बर्ताव करे। किसी भी जिम्मेदार व्यक्ति का न तो उस आबंटन पत्र में फोन नं. था न उस दरबान के पास। मैं भी निराश होकर वापस स्टेशन को लौट आई। मन बहुत दुखी हुआ मेरा उस रात। किसी प्रकार की भी असुविधा न हो मेरे परिवार को यह सोच कर ही मैं एक महीने पहले से ही लगी थी इन इंतजामों में और हुआ आखिर में वही जिसकी उम्मीद नहीं थी। पूरी रात स्टेशन पर बैठे-बैठे काटी सभी ने। उस दौरान कुछ लोगों को फोन किया मैंने, किसी ने फोन ही नहीं उठाया, ना तो किसी ने मदद की, ना ही हिम्मत दी। उम्मीद के सहारे मन ही मन जगन्नाथ प्रभु से प्रार्थना करते वापस पहुंची मैं, आशा के विपरीत इस बार पहली बार में ही गेस्ट हाउस का पता और रास्ता दोनों ही मिल गए।

चेहरे से मायूसी के बादल छटे और थोड़ी मुस्कान आई। पर थकान और नींद ने सारी हेकड़ी निकाल दी थी। सब छोड़-छाड़ कर मैंने जरूरी कागजों पर साइन किए और खुद को कमरे के हवाले। जाते ही सभी निढाल होकर पड़ गए बिस्तर पर। तभी रायपुर से आने वाले भी पधार लिए। अब तो मैं और निश्चिंत होकर लेट गई पलंग पर। कुछ देर बाद बच्चों ने जगाया कि कुछ खा लो। खाना तो बाद की बात थी। पहले स्नान आदि से निवृत्त हुए। थोड़ी देर बाद ही हम सब तैयार हो कर महाप्रभु के दर्शन को निकल लिए। मौसम बहुत सुहावना था, हल्की बारिश हो रही थी। रास्ते में सुंदर नजारे देखते हुए पहुंच गए मंदिर तक। बारिश के कारण श्रद्धालुओं की संख्या थोड़ी कम थी। हम लाईन में लगे और हमारी लाइन जल्दी-जल्दी आगे बढ़ने लगी। साथ ही बारिश भी तेज हो गई। भगवान जी दोबारा स्नान करवाने के फिराक में थे शायद। खैर भीगते-भागते पहुंच गए मंदिर प्रागण में। मंदिर की विशाल श्रृंखलाओं से भरा प्रांगण, चारों ओर गगनचुंबी शिखर और देवी देवताओं के अनगिनत मंदिर। सबसे पहले ही मंदिर की मुख्य रसोई थी, जहाँ महाप्रभु को लगाया जाने वाला भोग बनता है जिसे महाप्रसाद कहते हैं। मंदिर में सात बर्तनों को एक के उपर एक रखकर महाप्रसाद तैयार किया जाता है, लेकिन हैरानी की बात यह है कि प्रसाद सबसे ऊपर वाले बर्तन में ही पहले पकता है और यह कभी कम नहीं पड़ता। हृष्ट-पुष्ट रसोइए धोती और जनेऊ धारण किए किसी अंगरक्षक से कम नहीं लग रहे थे। सर पर महाप्रसाद उठाकर ले जा रहे थे। कितना मनोरम दृश्य था। मन में आया कितने अच्छे कर्म होंगे इनके जो ऐसी सेवा का सौभाग्य प्राप्त हुआ है इस जन्म में।

अब हम मंदिर के मुख्य द्वार तक पहुंच गए थे। बस कुछ ही क्षण में प्रभु के दुर्लभ दर्शन होंगे ये सोच कर ही मन प्रफुल्लित हुआ। अंदर भीड़ ज्यादा थी। पंक्ति भी बिना किसी बैरिकेड के, महिला पुरुष एक-साथ, भरपूर धक्का-मुक्की के साथ संघर्ष करते हुए आगे की ओर बढ़ते चले गए। सुरक्षाकर्मी मूक-दर्शक केवल देखने मात्र को थे, जो यकायक तभी चलायमान होते थे जब आप मंदिर के गर्भगृह के सम्मुख पहुंचे ही हो। वो आपको लगभग बलपूर्वक धकेल कर हटाते हैं। ये सब मैं पंक्ति में लगे-लगे देखती आ रही थी। जब मैं दर्शन के लिए सामने की ओर आई, तभी एक लम्बा सा आदमी मेरे सामने आ कर खड़ा हो गया। मैं खुद को संभाले इंतजार कर रही थी कि ये आगे बढ़े तो दर्शन हों। पर

भीड़ इतनी थी कि धक्का सह कर वही खड़े रह पाना मेरे बस की बात नहीं रह गई थी। थोड़ी दूर आगे आ कर मैं पुन: पीछे की ओर गई जहाँ सुरक्षाकर्मी खड़े थे। अब जाकर नैनों की प्यास पर ठंडे जल की धारा सा महसूस हुआ। तीनों मूरत नीम की लकड़ी से बनी होती है। भगवान जगन्नाथ, बलभद्र और सुभद्रा तीनों एक साथ विराजमान हैं। अनुपम छवि आंखों में बस गई। मैं वापस बाहर जाने वाली पंक्ति में शामिल हो गई। लेकिन हृदय वही छूट गया, उस मोहिनी मूरत में। काश ऐसा संभव होता कि हम वहाँ कुछ पल शांति से बैठकर उन्हें निहार पाते। पर ये तो सब कल्पना की बातें थी आज के समय में। मन तो कुछ भी चाहता है, हर चाहत पूरी ही हो जाए ये संभव तो नहीं। इसलिए "जो प्राप्त है वही पर्याप्त है" इस सिद्धांत का अनुसरण करते हुए अपने मन को मना लिया। बाहर आकर मंदिर के शिखर पर उड़ता ध्वज देखा जो कि हवा के विपरीत दिशा में होता है, यह आदिकाल से एक रहस्य है, जिसका पता कोई नहीं लगा पाया है। इस ध्वज को प्रतिदिन बदला जाता है, जिसे देखना भी अपने आप में एक आश्चर्य से कम नहीं था। जिस फुर्ती और सधे पांवों से ऊपर जाते हैं फिर नीचे आते हैं वो साधना ही कही जा सकती है। मंदिर के शिखर पर लगा चक्र सदैव आपको अपनी तरफ सीधा ही दिखेगा चाहे आप मंदिर के किसी छोर से देखें। साथ ही ये भी कि मंदिर के शिखर पर कोई भी पक्षी या विमान नहीं उड़ता। कारण किसी को भी नहीं पता। एक चमत्कार यह भी है कि दिनभर सूर्य के घूमने के बाद भी मंदिर की मुख्य संरचना की परछाई किसी पर नहीं पड़ती। अद्भुत किन्तु सत्य बात थी ये भी।

दर्शन के बाद हमने प्रांगण में स्थित अन्य मंदिरों में भी दर्शन किए। उसके बाद महाप्रसाद ग्रहण करने पहुंचे दुनिया की सबसे बड़ी रसोई में। बैठकर खाया सभी ने और थोड़ा महाप्रसाद साथ में रख लिया ताकि घर ले जा सकें। उसी परिसर में अनेक दुकानें थीं जहाँ तस्वीरें, मालाएं और अन्य विभिन्न प्रकार की चीजें बिक रही थी। जिसे जो पसंद आया ले लिया। अब बाहर का रूख किया। बाहर आकर सभी ने भोजन किया। फिर निकल गए तफरी करने लोकल बाजार की ओर। नए राज्य में आकर वहाँ की संस्कृति और सभ्यता को देखा नहीं तो फिर क्या ही किया। मेरी सासु मां, मां और मैं तीनों ही साड़ियों के शौकीन हैं, सभी ने वहाँ की संबलपुरी साड़ियाँ खरीदी। रास्ते में एक और मंदिर दिखा जो कि गुंडिचा माता का मंदिर था। माना जाता है कि ये जगन्नाथ भगवान की मौसी का घर है। यही वो स्थान है जहाँ रथ यात्रा के दौरान भगवान जगन्नाथ, बलभद्र और सुभद्रा 7 दिनों तक रुके थे। यह मुख्य जगन्नाथ मंदिर से 3 किमी. दूर स्थित है।फिर निकल पड़े ठिकाने की ओर। गेस्ट हाऊस पहुंच कर सभी आराम करने लगे।

अगले दिन सुबह जल्दी उठ कर हम सभी समुद्र तट की ओर निकले। समुद्र का किनारा और उगता हुआ सूरज जो दृश्य देखा वह शब्दों में बयां नहीं कर सकती। वास्तव में उस समुद्र तट का नाम सार्थक जान पड़ रहा था "स्वर्गद्वार बीच"। सुबह की शांत शीतल लहरें देखने में जितनी खूबसूरत लग रही थी, उतनी ही शांति उन लहरों को छूने में भी मिल रही थी। सर्दी की सुनहरी धूप साथ में लहरों की गरमाहट क्या ही कहने। क्या बड़े, क्या बूढ़े और क्या बच्चे सभी ने जो मजे किए उस दिन वो अविस्मरणीय रहेगा आजीवन। समुद्र का किनारा हो और नारियल पानी न पिया जाए ऐसा कैसे संभव हो सकता है भला। साथ में फोटोग्राफी से माहौल और आनंदमय बन गया। नमकीन पानी में नहा के सभी नमक और रेतमय हो गए थे, इसलिए अब सभी को वापस जाना था। वापस पहुंच कर सभी दोबारा नहा कर अगले गंतव्य की ओर प्रस्थान कर गए। चूंकि शाम तक लौटकर वापस भी आना था, हम जल्दी में थे। रास्ते में एक जगह रुककर नाश्ता किया फिर आगे बढ़ चले। रास्ते में कुछ स्थानीय मंदिरों के दर्शन करते हुए हम सीधे कोणार्क सूर्य मंदिर पहुंचे। सौन्दर्यीकरण तो बहुत हुआ है, सामने की ओर बहुत सारे पेड़-पौधे भी लगाए गए हैं। खाने-पीने की भी व्यवस्था है। सामने ही संग्रहालय बना हुआ है जिसमें सभी सूर्य मंदिरों का उल्लेख किया गया है। कोणार्क में कोण और अर्क की संधि है। अर्क का तात्पर्य सूर्य से होता है। चूँकि कोणार्क का मंदिर पुरी के जगन्नाथ मंदिर के उत्तर पूर्व कोण में स्थित है और प्रात:काल सूर्य की किरणें उसी ओर से आती हैं इसलिए उसका नाम कोणार्क रखा गया। 13वीं सदी में पूर्वी गंगा राजवंश के राजा नरसिंह देव प्रथम ने इस सूर्य मंदिर का निर्माण करवाया था। यह मंदिर

कलिंग वास्तुकला का एक बेहतरीन उदाहरण है और इसे सूर्य देव के रथ के रूप में बनाया गया है। मंदिर में 24 पहिये हैं, जिनमें से कुछ पहिये आज भी धूपघड़ी की तरह काम करते हैं और समय बताते हैं। कोणार्क सूर्य मंदिर को यूनेस्को द्वारा विश्व धरोहर स्थल घोषित किया गया है। यह मंदिर बलुआ पत्थर और ग्रेनाइट से बना है और इसकी दीवारों पर अद्भुत कलाकृतियां बनी हैं, जिनमें पौराणिक कथाएँ, रोज़मर्रा की गतिविधियाँ, काम-कला और पौराणिक जीव-जंतुओं के चित्र शामिल हैं। यह मंदिर न केवल धार्मिक स्थल है, बल्कि देश-विदेश से बड़ी संख्या में पर्यटक इसकी भव्यता और कलाकृतियों को देखने आते हैं। मंदिर काफी जीर्ण अवस्था में होने के कारण मंदिर में प्रवेश वर्जित है। गर्भगृह के मुख्य द्वार को पूरी तरह बंद कर दिया है। इसे प्राकृतिक आपदाओं और हमलों से बचाने के लिए बंद किया गया था। लेकिन अब देख कर लगता है किसी दुर्घटना से जनहानि न हो इसलिए बंद है। पर्यटक बाहर से ही कलाकृति का आनंद उठा सकते हैं। कोणार्क सूर्य मंदिर में सूर्य देव की प्रतिमा खंडित है। इस मंदिर में पूजा नहीं होती क्योंकि हिंदू धर्म की मान्यता अनुसार खंडित मूर्ति की पूजा वर्जित है। भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (ASI) विभाग ने इस मंदिर को एक ऐतिहासिक स्मारक घोषित कर दिया एवं मंदिर की देख-रेख का जिम्मा भी उन पर ही है। कुछ देर वहाँ के घास पर बैठ कर थकान उतारी, फोटोग्राफी के साथ हरियाली का आनंद उठाया फिर वापस निकल पड़े।

वापसी में हम वहाँ से लगभग 3 किमी. दूर चंद्रभागा बीच पर रुके और वहाँ पर बने अनेक होटलों में से एक में दोपहर का भोजन ग्रहण किया। बहुत स्वादिष्ट खाना था, मजा ही आ गया। भोजन के बाद चंद्रभागा बीच की ओर बढ़ चले, जहाँ पहले से ही काफी संख्या में लोग आनंद उठा रहे थे नजारों का। बहुत साफ-सुथरा और सुंदर तट। यहाँ का सूर्यास्त और सूर्योदय सबसे उत्तम दृश्यों में आता है। सूर्योदय तो नहीं सूर्यास्त के कुछ पल जरूर मिलें वहाँ हमें। हम इस यात्रा से अनेक खूबसूरत यादें लेकर लौट रहे थे। कुछ मोबाइल के फोटो, वीडियो के रूप में तो कुछ दिल-दिमाग में संजो कर। ये हमारी पहली सामूहिक पारिवारिक यात्रा थी, जो सफल हुई। वापस आ कर हम सभी ने अपने बिखरे सामानों को समेटा और रात को ही निकल पड़े रेल्वे स्टेशन की ओर रायपुर की ट्रेन पकड़ने। इस यात्रा की सबसे अच्छी और सार्थक बात ये रही कि मेरे बच्चों ने पुरे समय इस यात्रा का आनंद लिया बिल्कुल भी परेशान नहीं हुए न किया। इस सुखद यात्रा के लिए ईश्वर का बहुत-बहुत धन्यवाद।

जय जगन्नाथ

सरकारी नौकरी है सबसे प्यारी

हास्य कविता

श्री विद्या प्रकाश
सहायक लेखा अधिकारी

सरकारी नौकरी है सबसे प्यारी,
सेवा में इसमें होती है यारी।
जनता का सुख-दु:ख का रखे ध्यान,
यही है इसका असली मान।
सुबह समय से आना जरूरी,
पर कभी देर से आओ, तो भी मंजूरी।
चाय की प्याली, गपशप का दौर,
और रहता है, फाइलों का शोर।
कभी जनता कहे, जल्दी कर दो काम,
कभी नियम कहे, रुको, लो इम्तिहान।
सब्र से समझाकर, हल निकालें,
कभी हंसी, कभी कागज संभालें।
महीनों का वेतन टाइम पे आए,
बोनस, भत्ता, त्योहारों का तोहफा साथ में लाए।
छुट्टियों की गिनती पहले से तय,
सालभर की योजनाएं पहले ही बनाएं।
जनता कहे, भाग्यशाली हैं भाई,
दिल ही दिल में बाबू मुस्कुराए।
घर में नाम, समाज में सम्मान,
सरकारी बाबू कहलाने पर हो अभिमान।
रिटायरमेंट पर हो पेंशन का सुख,
बुढ़ापा कैसे गुज़रे, की चिंता से मुक्त।
सरकारी नौकरी है सबसे प्यारी,
जनता की सेवा, है सबको न्यारी।

अंत?

कविता

श्री कृष्ण कुमार जांगिड़
सहायक लेखा अधिकारी

अब समझ आने लगा है...
इस दौड़ का कोई अंत नहीं।
कोई रेखा नहीं,
कोई मील का पत्थर नहीं,
बस धूल है, और दौड़ते हुए लोग
बेतरतीब चेहरे, पसीने से ढके,
जो बदहवास भागे जा रहे हैं।
भागते-भागते जब थक जाता हूँ,
तो आँखें ढूंढती हैं
कोई बूढ़ा बरगद
जो बचपन में किताबों में मिलता था,
जैसा दादी की कहानियों में होता था,
घना... पुराना... और जिसकी छांव में
एक साँस की मोहलत मिल जाए
जो मेरी पीठ थपथपा दे,
और कहे "बस... अब रुक जा।"
पर यहाँ ना वो बरगद है
ना वैसा बचपन
और ना ही वो कहानियाँ।
आगे बढ़ने पर जब प्यास लगती है और
किसी राहगीर से पानी मांगता हूँ,
तो वो मुस्कुराता है और कहता है
"अरे आगे मिलेगा,
मुकाम पर... वहाँ सब मिलेगा।"
जब वहाँ पहुँचता हूँ,
तो सब अपने-अपने जूते के फीते कस रहे होते हैं,
घड़ियाँ सेट कर रहे होते हैं,
जैसे वक्त को हराना हो
कोई कह रहा होता है
"ये दौड़ असली है अब..."
मैं धीरे से पूछता हूँ
"और इस दौड़ का अंत?"
सब सकपका जाते हैं
जैसे मेरे प्रश्न का कोई अस्तित्व नहीं
हो जैसे कोई अंधविश्वास, कोई भूल।
फिर एक बुजुर्ग से चेहरे की हँसी निकलती है
हल्की सी, मगर चुभती हुई
"पगला गए हो क्या?
ये अंत क्या होता है?"

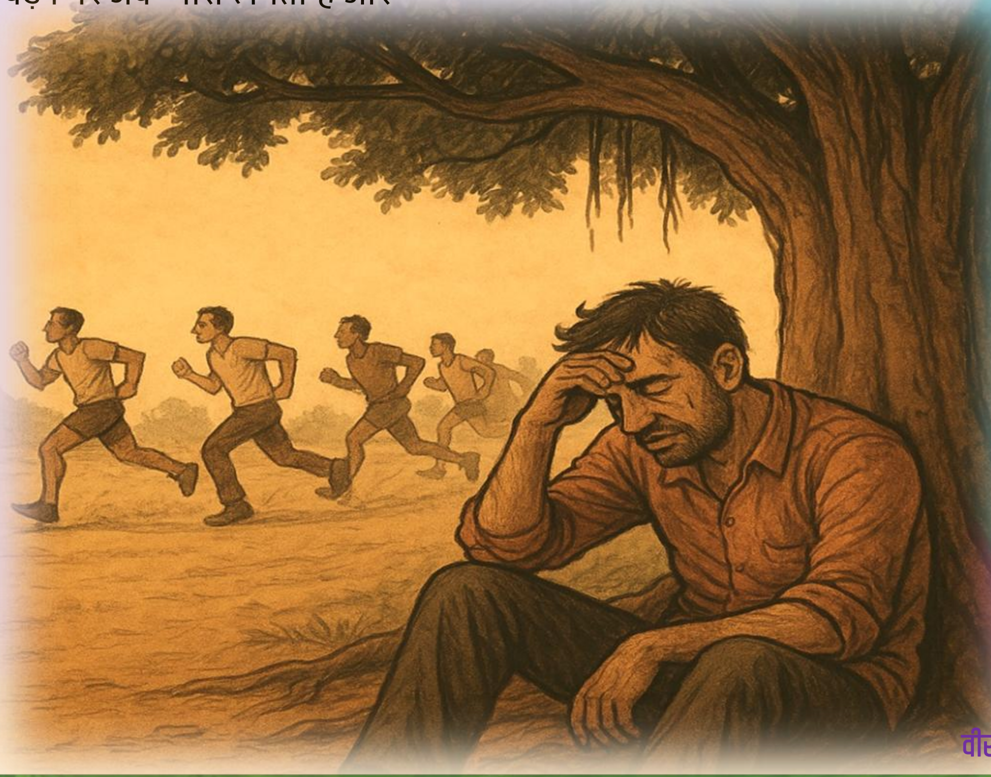

ये तेरा बिल, न मेरा बिल

हास्य कविता

श्री प्रदीप कुमार यादव
सहायक लेखा अधिकारी

ये तेरा बिल, न मेरा बिल, न किसका बिल निकला।
जो लाया बिल, वही बोला - कहो किसको मिला।।
कागजों में कागज, फाइलों में फाइलें छिपीं।
हस्ताक्षरों में उलझी, व्यय-तिथि सब लिपटीं।।
बाबू ने देखा, कहा - ये नहीं मेरा हिस्सा।
साहब ने हँसकर कहा - भेज दो ये ऊपरी किस्सा।।
चपरासी ने बोला - मुझे चाय का बिल चाहिए।
अफसर ने टोका - तुझे कुछ हिलना चाहिए।।
कंप्यूटर बोला - तुम्हारा बिल स्कैन नहीं।
प्रिंटर हँसा - बिना टोनर का प्रमाण नहीं।।
अधिकारी बोले - पुस्तिका का नियम तो यही कहता।
कर्मचारी रोया - बजट तो बस नाम का रहता।।
दफ्तर में बैठा हुआ क्लर्क भी हैरान हुआ।
"ये तेरा बिल, न मेरा बिल" का ही गुणगान हुआ।।
बैठक में सबने कहा - एक कमेटी बनाई।
कमेटी ने भी अगली कमेटी तुरंत बुलाई।।
बिल घूमता रहा, जैसे यायावर पथिक।
अधिकारी पूछे, क्यों खर्चा हुआ अधिक।।
चाय का बिल चढ़ गया, बिस्कुट का हिसाब नहीं।
पानी की बोतल गिनी, पर उसका जवाब नहीं।।
कोई कहे, सफाई का खर्चा यही रहा।
कोई कहे, अकाउंट का आँकड़ा यही रहा।।
महीने के अंत में रिपोर्ट आई भारी।
पर बिल वहीं घूम रहा, जैसे नटवारी।।
आड़ी-तिरछी रसीदें, पुरानी किताबों में।
हँसता रहा बिल अकेला, सरकारी हिसाबों।।
कर्मचारी बोला, "अगर पास हो तो बोनस मिल जाए।"
अफसर बोला, "अगर फेल हो तो क्लोज़नेस मिल जाए।।"
जनता हँसती बोली, ये सब खेल निराला।
"तेरा बिल, न मेरा बिल" का है बोलबाला।।

कामकाजी महिला

कविता

सुश्री सुष्मिता श्रीवास्तव
आशुलिपिक

सुबह की पहली किरण संग,
उसके हाथों में कई काम हैं,
रसोई की आग, बच्चों की पुकार,
और सपनों के अनगिन नाम हैं।

चूल्हा चौका, दफ्तर की राह,
हर मोड़ पर दोहरी चाह,
कभी माँ, कभी बेटी, कभी साथी,
हर रिश्ते की परछाई बन निभाती।

भीड़भाड़ में दौड़ती बसें,
और समय से उलझती घड़ियां,
थकन के बोझ तले दबकर भी,
उसकी हिम्मत नहीं टूटती कभी।

निंदक कहते “स्त्री है नाजुक”
पर वो बनती लौह की दीवार,
आँखों में छुपा लेती आँसू,
होंठों पर रखती मुस्कान अपार।

कामकाजी महिला की यह कहानी,
संघर्षों में भी रोशनी बुनती,
हर कठिनाई को अवसर मानकर,
वो जीवन की किताब गढ़ती।

मैं कायर हूँ !!

कविता

श्री राहुल मैत्रेय
वरिष्ठ लेखापाल

मैं कायर हूँ,
एक भूखे ने रोटी मांगी
मैं रोटी लाने के बजाए
कोरे पन्ने पर कविता लिख दी
उसके हक में
विद्रोह करने के बजाए
उसकी आवाज बनने के बजाए
मैंने कविता लिख दी
मैं चाहता तो
भूख से मरते हुए इंसान को
अपना कंधा दे सकता था,
मैं चाहता तो
अन्याय की दीवारों पर
अपनी हथेली पटक सकता था,
लेकिन मैंने कलम उठाई–
और अपराध संगृहीत कर लिया।
मैं कहना चाहता हूं
उन सभी मजलूमों से
चाहे जो हो जाए,
मैं कितना भी रोऊँ
गिड़गिड़ाऊं
या गुहार लगाऊं
इस निकृष्ट कायर अपराध के लिए
मुझे माफ मत करना

कविताएं क्रांति लाती होंगी
लेकिन मैं कायर हूँ।

और अगर किसी दिन
मेरे शब्दों में आग दिखे,
तो जान लेना–
वह आग मेरी नहीं,
बल्कि उस भूख की है
जिसे मैंने अनसुना किया था।

युद्ध जरूरी होता है

प्रेरक कविता

श्री देवेन्द्र कुमार मिश्रा
सहायक लेखा अधिकारी

दोनों सेना के मध्य खड़े, मधुसूदन और धनंजय थे,
वैचित्रवीर्य को खबर सभी, कुरुक्षेत्र की देते संजय थे,
अर्जुन ने दृष्टि जिधर डाली, हर ओर सगे सम्बंधी थे,
कोई भाई था, था गुरू कोई, सब अपने ही प्रतिद्वंदी थे।

अपनों की और परायों की, कैसी यह अजब समीक्षा है,
बोले अर्जुन मधुसूदन से, ये कैसी घोर परीक्षा है,
गुरु द्रोण, भीष्म सम्मुख हैं और, बांधव समाज है खड़ा हुआ।
उन पर ही शस्त्र चलाना है, जिनके प्रसाद से बड़ा हुआ,

धिक्कार मुझे है मधुसूदन, धिक्कार मेरे बाणों पर है,
है घृणा मुझे जीवन से अब, धिक्कार मेरे प्राणों पर है,
चल जाए गुरु पर शस्त्र मेरे, इस जन्म नहीं यह संभव है,
अपनों से युद्ध करूँ माधव, मुझसे ये अभी असंभव है।

अपमान, हार, और वनजीवन, है सब कुछ अंगीकार मुझे।
हे केशव कर दो क्षमा मुझे, ये युद्ध नहीं स्वीकार मुझे

ये दृष्टि जहाँ तक जाती है, है भरा हुआ कुछ रिक्त कहाँ,
खुद ही देखो! हे मधुसूदन! बोलो! मेरा अस्तित्व कहाँ!
हो भाव विह्वल, केशव बोले, हे पार्थ! धैर्य खोते क्यूँ हो!
इस अट्टहास, के प्रांगण में, हो विकल, व्यर्थ रोते क्यूँ हो!

अस्तित्व नहीं वो खो सकता, जिसको है रचा विधाता ने,
वो पुत्र भला क्या पुत्र नहीं, जिसको जन्मा हो माता ने,

तुमको लगता है खड़े हुए, जो यहाँ, पार्थ! सब अपने हैं!
खोये हो किस भ्रम में तुम, आंखें खोलो, सब सपने हैं!
सोचो गर होते अपने ये, तो कुरुक्षेत्र में आते क्यों!
थोड़ा भी मोह अगर होता, तेरे विरुद्ध ये जाते क्यों!

जीवन में तुमने इनका कुछ, हो अगर बिगाड़ा तो बोलो,
घर किसी योद्धा का तुमने, हो अगर उजाड़ा तो बोलो,
गर स्नेह जरा इनमें होता, आखिर तटस्थ रह सकते थे,
दुर्योधन का पक्ष लिए हैं जो, तेरी खातिर लड़ सकते थे,

क्या सारे रिश्ते -नातों का, केवल दायित्व तुम्हारा है!
क्या प्रश्न कौंधता नहीं पार्थ! फिर सबने क्यों ललकारा है!
शायद तुम भूल गए अर्जुन, वो चीर हरण पांचाली का,

क्या दृश्य नहीं विचलित करता, उस नारी की बदहाली का
द्रुपदसुता का करुणा क्रन्दन, तुमको याद नहीं है अब,
प्रतिशोध शत्रु से ले पाओ, ऐसा उन्माद नहीं है अब?

अब भी है समय! धनंजय! बस अपनी आँखों को खोलो तुम!
त्यागो सब मोह व्यर्थ का अब, गाण्डीव की भाषा बोलो तुम!

उद्यत हो! युद्ध करो अर्जुन, हर दिग में हाहाकार करो!
उठ करके सत्य विजय कर दो, कौरव दल का संहार करो!
हे श्रेष्ठ धनुर्धर, सुनो, शीघ्र जागृत हो समर, समर कर दो!
रखो तुम बाण प्रत्यंचा पर, रण से कुरुक्षेत्र अमर कर दो!

पृथापुत्र को गीता का, उपदेश बताया माधव ने,
कर्मयोग और भक्ति का, उद्देश्य बताया माधव ने,
अप्रमेय, अविनाशी है, आत्मा तो अमर स्वभावी है,
हे अर्जुन, इस भौतिक शरीर का, अंत अवश्यंभावी है,

इसलिए छोड़कर घबराहट, तुम अंतर्मन अब शुद्ध करो,
जागो, जागो हे कौन्तेय! उठो! हे भारत, युद्ध करो।

सुनकर उद्बोधन केशव का, सब मोह पार्थ का भंग हुआ,
हट गया तिमिर अब आँखों से, स्फूर्तिवान सब अंग हुआ।
प्रस्ताव यशोदानंदन का, अब अर्जुन को मंजूर हुआ ,
बढ़ गया हाथ गाण्डीव तरफ, मन का सब संशय दूर हुआ,

तन गयीं भृकुटियां अर्जुन की, थे दोनों लोचन लाल हुए,
वो शब्द नहीं थे केशव के, मानो कौरवों का काल हुए,
भूगोल बदलने की खातिर, इतिहास नया आरम्भ हुआ,
कुरु वंश ध्वंस का दृश्य लिए, तब महासमर प्रारम्भ हुआ।

आगे की कथा सुनाऊँ क्या, अब कलम बंद करता हूँ मैं,
अपनों का संघर्ष लिखूं क्या, लेखनी मंद करता हूँ मैं,
देता हूँ वाणी को विराम, अब और कहानी कौन कहे!
घायल की चीखें कौन कहे, आँखों का पानी कौन कहे,

बस इतना कहना चाहूंगा मैं, भारत के सब वीरों से,
बंदूकों से, तोपों से, बरछी, कटार, शमशीरों से,
आवाहन करके कहता हूँ, मैं सीमा पर रणधीरों से,
भारत के भावी भविष्य से, भारत की तक़दीरों से,
स्वाभिमान की खातिर होना, क्रुद्ध जरूरी होता है,
बात आन पर आ जाए, तो युद्ध जरूरी होता है।।

पिता का संघर्ष

कविता

सुश्री काजल वर्मा
सहायक लेखा अधिकारी

पिता के संघर्ष का मैं क्या ही मिसाल दूँ।
मैं सिर्फ कोशिश ही कर सकती हूँ कि उनका कर्ज उतार दूँ।
देखा था उनको सुबह तड़के उठकर काम पर जाते थे।
देर रात मेरे सोने के बाद लौटकर आते थे।
फिर प्यास से सर पर हाथ फिर कर नींद में बतियाते थे।
सोचती हूँ उनका इन बातों में मैं क्या ही जवाब दूँ।
पिता के संघर्ष का मैं क्या ही मिसाल दूँ।
मैं सिर्फ कोशिश ही कर सकती हूँ कि उनका कर्ज उतार दूँ।
देखा था उनको नीली सफेद घिसी हुई हवाई चप्पल में।
क्योंकि शायद पैसे खत्म हो जाते थे मेरी कापी, कलम और किताब में।
अब सोचती हूँ क्या कर सकती हूँ उनके सम्मान में,
कुछ ज्यादा तो नहीं लेकिन दिल में आता है कि ये महंगे जूते उतार दूँ।
पिता के संघर्ष का मैं क्या ही मिसाल दूँ।
मैं सिर्फ कोशिश ही कर सकती हूँ कि उनका कर्ज उतार दूँ।
और देखा उनको पसीने में लथपथ साइकिल पर आते थे।
पिता ही नहीं मेरे लिए तो वो ही मां का भी फर्ज निभाते थे।
कोई जादूगर थे शायद अपने समय के,
अठन्नी, चवन्नी जोड़कर रुपया बनाकर कर लाते थे।
अब सोचती हूँ कि उनकी इस कारीगरी का
उनको कौन सा पुरस्कार, कौन सा खिताब दूँ।
पिता के संघर्ष का मैं क्या ही मिसाल दूँ।
मैं सिर्फ कोशिश ही कर सकती हूँ कि उनका कर्ज उतार दूँ।
इतवार की शाम को दरवाजे पर एक खटिया बिछाते थे
फिर उलटी सीधी गिनती,
12 खड़ी और पहाड़े खूब रटवाते थे।
जोड़-घटाव, गुणा भाग पहेलियों में भी उलझाते थे।
मेरे जीवन के एक मात्र शख्स हैं वो
जो मुझको खुद से ज्यादा कामयाब देखना चाहते हैं
तब खूब सोचती थी कि उनके इस ख्वाब को खूब उड़ान दूँ।
पिता के संघर्ष का मैं क्या ही मिसाल दूँ।
मैं सिर्फ कोशिश ही कर सकती हूँ कि उनका कर्ज उतार दूँ।

मेरा सच

कविता

श्री नीरज नायक
सहायक लेखा अधिकारी

लोग पूछते हैं – "तू चुप क्यों है?"
अरे, हर शोर में खो नहीं सकता हूँ मैं।
हर चेहरा, हर आवाज एक जैसे नहीं होते,
कुछ सवाल खामोशी में ही जवाब देते हैं।

जिंदगी ने तजुर्बा दिया है थोड़ा कड़वा,
इसलिए अब थोड़ा संभलकर जीता हूँ मैं।
ना हर मुस्कान के पीछे सच्चाई होती है,
ना हर रिश्ते में वफ़ा की परछाई होती है।
अब दिल खोलने से पहले सोचता हूँ बहुत,
क्योंकि हर अपना, अपना नहीं होता हर वक्त।

चेहरा पढ़ना सीख लिया है अब,
क्योंकि शब्दों से अब भरोसा नहीं होता।
लोग मीठा बोलते हैं मतलब के लिए,
और पीठ पीछे तीर चलाते हैं खामोशी से।
अब आंखों की नमी भी छुपा लेता हूँ,
क्योंकि हर कोई समझ नहीं पाता हर बात को।

मैं अकेला नहीं हूँ, बस अलग हूँ।
जिंदगी से सीखा है खुद को समझना,
अब भीड़ से दूर रहकर सुकून मिलता है,
जहां न दिखावा है, न फरेब है,
बस मैं हूँ, मेरी सोच, मेरा सच।

वीरांगना के 75वें अंक का विमोचन

माननीय संसदीय राजभाषा समिति की तीसरी उप-समिति द्वारा निरीक्षण के दौरान कार्यालय की प्रदर्शनी

श्री श्रीरंग आप्पा बारणे, संयोजक, तीसरी उप-समिति कार्यालय प्रदर्शनी का अवलोकन करते हुए

माननीय संसदीय राजभाषा समिति की तीसरी उप-समिति का सम्मान करते हुए महालेखाकार एवं वरिष्ठ उप-महालेखाकार/प्रशासन महोदय

वरि. उप-महालेखाकार/प्रशासन एवं महालेखाकार महोदय, सफल निरीक्षण के उपरांत प्राप्त प्रमाण-पत्र के साथ राजभाषा कार्मिकों के साथ में

बाएं से दाएं : श्री चंद्रकांत एरेकर (एम.टी.एस.), श्री अश्वनी माखीजा (व.ले.अ./सा.अनु.), श्री नीरज कुमार (सहायक निदेशक/राजभाषा), श्री सिद्धार्थ बोन्दाडे (महालेखाकार), श्री दिनेश हरीराम माटे (वरि. उप-महालेखाकार/प्रशासन), सुश्री निशा कुमारी (वरि. अनुवादक), कनिष्ठ अनुवादक सुश्री दीप्ती वर्मा एवं श्री रूपेन्द्र कुमार कौशल

स्वतंत्रता दिवस - 2025

हिंदी पखवाड़ा समारोह - 2025

हिंदी प्रतियोगिताओं की झलकियां

हिंदी पखवाड़ा के दौरान बालकों के लिए काव्य पाठ / गीत गायन प्रतियोगिता

त्वरित प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता

गीत गायन एवं कविता पाठ प्रतियोगिता

हिंदी पखवाड़ा - 2025 का समापन

कार्यालय महालेखाकार
(लेखा एवं हकदारी)
प्रथम एवं द्वितीय,
मध्य प्रदेश, ग्वालियर
हिंदी पखवाड़ा समारोह - 2025
दिनांक : 14/09/2025 से 29/09/2025

हिंदी पखवाड़ा के दौरान बालकों के लिए काव्य पाठ / गीत गायन प्रतियोगिता के विजेता

हिंदी पखवाड़ा - 2025 के दौरान आयोजित नारा लेखन प्रतियोगिता के विजेता

भारत के विकास के क्रम में,
ऐसी भी परिपाटी हो,
देश प्रेम से हृदय भरा हो,
हिंदी सबको आती हो ।

प्रथम पुरस्कार - श्री देवेंद्र कुमार मिश्रा, सहायक लेखा अधिकारी

जन-जन की, हर मन की है ये पुकार,
नवसृजन का नवसंकल्प लिए भारत है तैयार ।

द्वितीय पुरस्कार - श्री गौरव चतुर्वेदी, डी.ई.ओ. ग्रेड बी

हिंदी मातृभाषा है, सो माँ सम इसको प्यार दें,
हिंदी में पढ़े-लिखें, माँ का ऋण उतार दें ।

तृतीय पुरस्कार - श्री आनंद कुमार तिवारी, लेखापाल

कार्यालय महालेखाकार
(लेखा एवं हकदारी)
प्रथम एवं द्वितीय,
मध्य प्रदेश, ग्वालियर
हिंदी पखवाड़ा समारोह - 2025
दिनांक : 14/09/2025 से 29/09/2025

<u>बाएं से दाएं</u>: श्री अमर मीना, उप-महालेखाकार/लेखा एवं वी.एल.सी., श्री दिनेश हरिराम माटे, वरि. उप-महालेखाकार/प्रशासन एवं पेंशन, श्री हरजिन्दर सिंह, उप-महालेखाकार/प्रशासन एवं पेंशन, मुख्य अतिथि श्री ईश्वरचंद्र रामचंद्र करकरे एवं महालेखाकार महोदय श्री सिद्धार्थ बोन्दाडे

कार्यालय महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी), मध्य प्रदेश, ग्वालियर का प्रांगण